मासिक समाचारपत्र ● पूर्णांक 45 ● वर्ष 5, अंक 8-9 ● अक्टूबर-नवम्बर 2015 (संयुक्तांक) ● पाँच रुपये ● 16 पृष्ठ

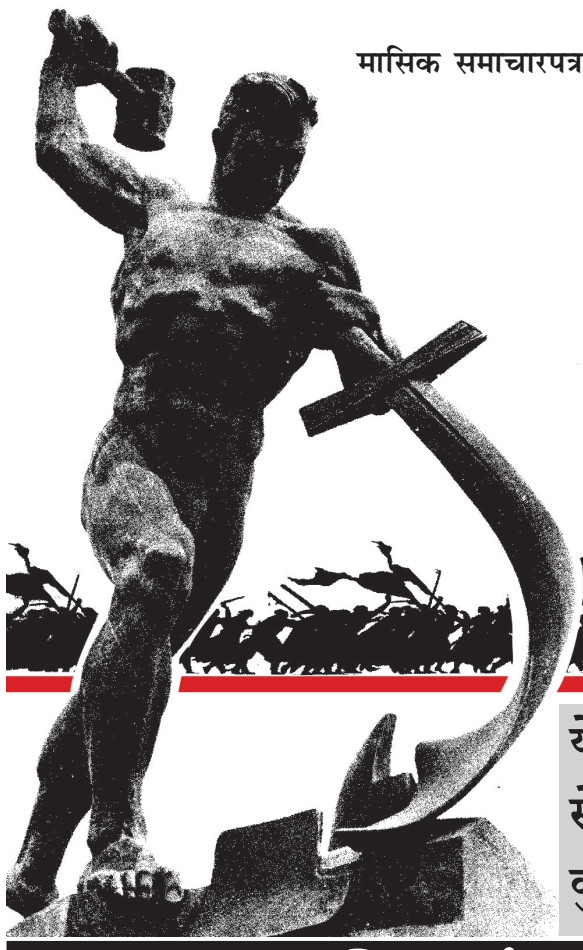

# मज़दूर बिगुल

ये मौतें बीमारी की वजह से हैं या कारण कुछ और है? 7

अन्तर-साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्धा का अखाड़ा बना सीरिया 13

एक गोभक्त से भेंट 15 – हरिशंकर परसाई

### बिहार में मोदी और संघ परिवार की नीतियों की करारी हार

## यह निश्चिन्त होने का नहीं बल्कि फासीवाद के विरुद्ध लड़ाई को और व्यापक व धारदार बनाने का समय है!

**सम्पादक मण्डल**

तीन महीनों से जारी भाजपा के धुआँधार प्रचार, नरेन्द्र मोदी की ढाई दर्जन रैलियों और 3000 करोड़ के चुनावी खर्च के बावजूद बिहार विधानसभा चुनाव में जद (यू), राजद और कांग्रेस के महागठबन्धन ने भाजपा गठबन्धन को चारों खाने चित्त कर दिया। सारा हाईटेक प्रचार और मीडिया प्रबन्धन धरा का धरा रह गया। सवा करोड़ रुपये के पैकेज और 'विकास' के दावों से शुरू हुआ मोदी का प्रचार दादरी के बर्बर हत्याकाण्ड और गोहत्या को मुद्दा बनाने से लेकर ख़ुद प्रधानमन्त्री द्वारा साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण की घटिया कोशिशों तक जा पहुँचा। नीतीश और लालू के जातीय जनाधार की काट के लिए जोड़ी गयी मांझी-कुशवाहा-पासवान की तिकड़ी भी किसी काम नहीं आयी।

इस चुनाव में महागठबन्धन की विजय के साथ ही बुद्धिजीवियों और तमाम प्रगतिशील लोगों का एक बड़ा हिस्सा इस बात को लेकर बेहद खुश है कि भारतीय जनता पार्टी के रूप में साम्प्रदायिक फासीवाद की पराजय हुई है और फासीवादी संगठनों के देशभर में बढ़ते उत्पात पर लगाम लग गयी है। इसमें कोई शक नहीं कि इस हार से भाजपा को भारी नुकसान उठाना पड़ा है और भाजपा में आंतरिक कलह का एक दौर शुरू हो गया है। नरेन्द्र मोदी और अमित शाह की जोड़ी ने तमाम पुराने और बिहार के स्थानीय नेताओं को किनारे करके जिस तरह से सारा प्रचार अभियान अपने को आगे करके चलाया उसके बाद हार की गाज भी उन पर गिरनी ही थी। अब शत्रुघ्न सिन्हा और अरुण शौरी से लेकर आडवाणी-जोशी-यशवन्त सिन्हा जैसे किनारे लगा दिये नेता और बिहार के कई सांसद भी खुलकर कह रहे हैं कि हार की ज़िम्मेदारी नरेन्द्र मोदी की है। लोकसभा चुनाव में जीत के बाद दिल्ली और फिर बिहार में मिली करारी हार से वोट बटोरने वाले नेता के रूप में मोदी की छवि की हवा निकल गयी है। भाजपा में यह कलह और उठापटक अभी और बढ़ेगी। लेकिन क्या इसे देश में फासीवादी ताक़तों की पराजय या उसकी उल्टी गिनती की शुरुआत कहा जा सकता है? क्या फासीवाद, धार्मिक उन्माद और दकियानूसी कट्टरपन की शक्तियों के ख़िलाफ़ लड़ाई में हम थोड़ा भी निश्चिन्त हो सकते हैं? इन सवालों के जवाब में पुरज़ोर ढंग से **'नहीं'** कहा जाना चाहिए।

यह सही है कि जनप्रतिनिधियों के चुनाव की मौजूदा पूँजीवादी प्रणाली में चुनाव नतीजे वास्तविक जनभावनाओं को उजागर नहीं करते लेकिन फिर भी एक हद तक तो ये उजागर करते ही हैं। चुनाव नतीजों के आधार पर इतना तो बेहिचक कहा जा सकता है कि मतदाताओं की बहुसंख्या ने भाजपा गठबन्धन के खिलाफ अपनी नाराज़गी जाहिर की है। कुल 243 सीटों में से 178 यानी दो तिहाई से भी अधिक सीटें महागठबन्धन में शामिल दलों को मिली हैं। यह साफ है कि लोगों ने मोदी सरकार की घोर पूँजीपरस्त आर्थिक नीतियों और हिन्दुत्ववादी फासिस्ट राजनीति और सामाजिक-सांस्कृतिक नीतियों के खिलाफ अपना मत दिया है। 'विकास' के लम्बे-चौड़े दावों में से कोई भी पूरा होना तो दूर की बात है, पिछले डेढ़ साल में खाने-पीने, दवा-इलाज और शिक्षा जैसी बुनियादी चीज़ों में बेतहाशा महँगाई, मनरेगा और विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं में भारी कटौती से आम लोग बुरी तरह तंग हैं। बिहार के करोड़ों मज़दूर देश भर में जाकर कारख़ानों-खदानों-बन्दरगाहों पर मज़दूरी करते हैं और वे अपने अनुभव से जान रहे हैं कि मोदी सरकार आने के बाद से मज़दूरों के काम करने और जीने की परिस्थितियाँ किस कदर कठिन हो गयी हैं। यह भी एक मानी हुई सच्चाई है कि समाज का ऊपरी सम्पन्न तबका लोकतंत्र के इस तमाशे में कम दिलचस्पी रखता है और अधिकांशतः वह वोट डालने जाता ही नहीं। आम ग़रीब मेहनतकश व मध्यवर्गीय लोग ही वोट

(पेज 9 पर जारी)

**...जिन नीतीश कुमार से बहुत से लोग सामाजिक न्याय की आस लगा रहे हैं उन्होंने नवउदारवादी नीतियों को बिहार में इतनी कुशलता से लागू किया कि पूँजीवादी बुद्धिजीवियों से लेकर कॉरपोरेट मीडिया तक उन पर फ़िदा रहते थे। ...गुजरात के मासूमों की लाशों पर सवारी करके जब 2003 में मोदी गुजरात के मुख्यमंत्री बने तो वाजपेयी सरकार में कैबिनेट मन्त्री नीतीश कुमार ने बधाई देते हुए कहा था, "मैं उम्मीद करता हूँ कि नरेन्द्र मोदी गुजरात तक ही सीमित नहीं रहेंगे। उनकी सेवाओं की ज़रूरत तो पूरे देश को है"।**

### हिन्दुत्ववादी फासिस्टों द्वारा दंगा कराने के हथकण्डों का भण्डाफोड़

## उत्तर-पश्चिमी दिल्ली की मज़दूर बस्तियों में साम्प्रदायिक तनाव भड़काने की संघ परिवार के संगठनों की कोशिशें इनके तौर-तरीक़ों का महज़ एक नमूना हैं

हाल के कुछ महीनों के दौरान उत्तर-पश्चिमी दिल्ली की मज़दूर बस्तियों में हिन्दुत्ववादी कट्टरपंथी ताकतें बहुत ही योजनाबद्ध ढंग से और षडयंत्रकारी तौर-तरीकों से साम्प्रदायिक तनाव उकसाने और दंगों की ज़मीन तैयार करने में लगी हुई हैं। इस इलाके के पार्कों और डी.डी.ए. की खाली पड़ी ज़मीनों पर लगने वाली आर.एस.एस. की शाखाओं की संख्या में भारी बढ़ोत्तरी हुई है। साथ ही बजरंग दल की सक्रियता भी काफी बढ़ी है। होलम्बी कलां, होलम्बी खुर्द, बवाना, नरेला, भलस्वा डेरी आदि जगहों पर स्थित इस इलाके की अधिकांश मज़दूर बस्तियाँ ऐसी पुनर्वास कालोनियाँ हैं जहाँ दिल्ली के विभिन्न इलाकों से उजड़कर आयी मज़दूर आबादी को बसाया गया है। इन बस्तियों में अवैध शराब, स्मैक, अन्य नशों, जूआ आदि के ग़ैरक़ानूनी धंधे बड़े पैमाने पर चलते हैं और आम मज़दूर आबादी के साथ-साथ लम्पट तत्व भी अच्छी-खासी संख्या में मौजूद हैं। संघ की शाखाओं में दुकानदारों, ठेकेदारों, मकान मालिकों, प्रापर्टी डीलरों और

(पेज 8 पर जारी)

**उत्तर प्रदेश के दादरी में गोमांस की अफ़वाह उड़ाकर जिस तरह से अख़लाक़ नाम के एक बुज़ुर्ग को पीट-पीटकर मार डाला गया और उसके एक बेटे को अधमरा कर दिया गया वह कोई "अचानक हो गयी दुर्घटना" नहीं थी जैसाकि मोदी सरकार के मन्त्री महेश शर्मा का कहना है। दादरी का दौरा कर चुके कई जाँच दलों की रिपोर्ट से अब यह साफ़ हो चुका है कि इसके पीछे संघ परिवार के संगठनों का महीनों पहले से जारी सुनियोजित काम था। हम यहाँ पर नौजवान भारत सभा, उत्तर-पश्चिमी दिल्ली की जाँच-पड़ताल टीम की रिपोर्ट का सार-संक्षेप प्रकाशित कर रहे हैं जो इनके ऐसे ही तौर-तरीक़ों को उजागर करती है। पूरी रिपोर्ट इंटरनेट पर इस लिंक से पढ़ी जा सकती है:**
**https://naujavanbharatsabha.wordpress.com/2015/09/20/rss-plan-communal-tension/**

# आपस की बात

## स्त्रियों के उत्पीड़न और बलात्कार की बढ़ती घटनाओं के पीछे कारण क्या?

हम समाज में आये दिन स्त्रियों पर हो रहे अत्याचार छेड़छाड़ और बलात्कार जैसी घटनाएँ अखबारों और टी.वी चैनलों पर देखते और पढ़ते हैं। कभी कोई महिला घरेलू हिंसा का शिकार होती है, कभी दहेज के लिए किसी मासूम की बलि चढ़ा दी जाती है। तो कभी लड़कियों के साथ गैंग रेप जैसी वीभत्स घटना घटती है। कभी लड़कियों के पहनावे को लेकर सवाल उठते हैं तो कभी इन घटनाओं को लेकर भारतीय 'संस्कृति और परम्परा' का हवाला दिया जाता है जिसके अनुसार स्त्रियों को सिर्फ गृहिणी होना चाहिए।

कुछ अव्वल दर्जे के मूर्ख इन घटनाओं के पीछे पश्चिमी मूल्यों के प्रभाव की बात करते नहीं थकते। लेकिन असल बात यह है कि आज स्त्रियों पर बढ़ रहे अत्याचारों का सबसे बड़ा कारण यह है कि आज हम जिस समाज में जी रहे हैं वह एक पितृसत्तात्मक समाज है, यानी कि पुरुष प्रधान समाज है। यह समाज स्त्रियों को भोग विलास की वस्तु और बच्चा पैदा करने (यानी कि 'यशस्वी पुत्र') का यन्त्र समझता है। हमारे समाज में प्रभावी पुरुषवादी मानसिकता स्त्रियों को चाभी का खिलौना समझती है जिसे जैसे मर्जी इस्तेमाल किया जा सकता है। तभी स्त्रियों के साथ होने वाली घटनाओं के पीछे 50 से 60 फीसदी उनके अपने नज़दीकी रिश्तेदार या पड़ोसी होते है और ऐसी घटनाओं में माँ-बाप को पता होने के बावजूद वे चुप ही रहते हैं क्योंकि ऐसी घटनाओं में बिना सोचे समझे स्त्रियों को ही दोषी ठहरा दिया जाता है। इन घटनाओं के पीछे दूसरा सबसे बड़ा कारण ये पूँजीवादी व्यवस्था है जिसने स्त्रियों को उपभोग की वस्तु बना दिया है पिछले दो दशकों में स्त्री-विरोधी अपराधों में बढ़ोत्तरी के कारण को देखें तो तो साफ हो जायेगा कि 1990 में सरकार की उदारीकरण- निजीकरण की नीतियों की वजह से पूरे देश में एक नव-धनाढ्य अभिजात वर्ग पैदा हुआ है जो खाओ-पियो-ऐश करो की संस्कृति में ही जीता है। जिसकी मानसिकता है कि वह पैसे के दम पर कुछ भी खरीद सकता है, और दूसरी तरफ उपभोक्तावादी संस्कृति में हर चीज़ की तरह स्त्री को भी एक बिकाऊ माल बना दिया है। यहाँ औरतों को सिर्फ एक माल के रूप में पेश किया जाता है। टीवी, अखबारों और इन्टरनेट में जो सड़ाँध भरी संस्कृति और अश्लीलता परोसी जाती है वह भी समाज में स्त्री-विरोधी अपराधों की ज़मीन तैयार करती है।

हालांकि सरकार स्त्री-विरोधी अपराधों को रोकने के लिए सख्त कानून व कुछ दोषियों को सज़ा देने का तामझाम भी करती है लेकिन क्या सिर्फ सख्त कानून बनाने या कुछ दोषियों को सजा देने से ऐसी घटनाओं पर रोक लगायी जा सकती है – नहीं। असल में इसके लिए हमें पोर-पोर में बसी स्त्री-विरोधी मानसिकता पर चोट करनी होगी, इस पितृसत्ता और पूँजीवादी मानवद्रोही बर्बर व्यवस्था को जड़ से उखाड़ फेंकना होगा। हमें रोज़मर्रा के जीवन में अपने हक़ों के लिए लड़ना होगा, सड़कों पर उतरकर अपनी अस्मिता और अधिकारों की हिफ़ाज़त करनी होगी। लेकिन बहनो और साथियो, इसके लिए भी हमें अपने संगठन बनाने होंगे। क्योंकि एकजुटता की ताकत ही सबसे बड़ी ताकत होती है। जब तक हम एकजुट न होंगे तब तक हम इस मानवद्रोही व्यवस्था का कुछ नहीं कर सकेंगे। आइये, अपनी एकजुटता और संगठन से इस पूरी पूँजीवादी व्यवस्था का दम निकाल दें। और एक नये समाज का निर्माण करें।

**– बण्टी, कलायत, हरियाणा**

## मज़दूर अख़बार की क्रान्तिकारी भूमिका

मैंने कहीं पढ़ा था कि रूस में जो मज़दूरों की क्रान्ति हुई उसके पीछे वहाँ के क्रान्तिकारियों द्वारा प्रकाशित अख़बारों की बहुत बड़ी भूमिका थी। न केवल वह अख़बार मज़दूरों को उनके जीवन की समस्याओं के बारे में जागरूक करते थे, बल्कि ऐसे अख़बार मज़दूरों को आपस में जोड़ने का भी काम करते थे। फिर भी मैं पूरी तरह नहीं समझ पाया हूँ कि मज़दूर अखबार के द्वारा देश में क्रान्तिकारी पार्टी किस तरह से बनायी जा सकती है। इसके बारे में भी कभी 'मज़दूर बिगुल' में लिख सकें तो अच्छा रहेगा। इसके बारे में और पढ़ने की सामग्री भी बताइयेगा।

**- अवनीश कुमार, बाराबंकी**

## केजरीवाल सरकार का "आम आदमी" चेहरा एक बार फिर बेनकाब

(पेज 5 से आगे)

अमल होने के आसार दूर दूर तक नहीं दिख रहे है। अब श्रीमान सुथरे केजरीवाल बड़े बेशर्मी से कहते हुए नज़र आते हैं कि अगर इनमे से 20-30 फीसदी वादे भी पूरे हो गए तो बहुत है। ज़ाहिर है कि ये 20 फीसदी वादे जो केजरीवाल ने दिल्ली के व्यापारियों, मालिकों से किये वो ज़रूर पूरा करेंगे और कर भी रहे है, जैसे कि वैट को आसान बनाना, व्यापारियों की टैक्स चोरी पर छापे बंद करवाना आदि। लेकिन जब मज़दूर और कर्मचारी अपनी माँगों को लेकर दिल्ली सचिवालय जाते हैं तो उनपर बर्बर लाठीचार्ज करवाया जाता है और जेल भेजा जाता है। ये है इस बहरूपिया का असली चेहरा।

पिछले दिनों दिल्ली के आँगनवाड़ी कर्मचारियों की हड़ताल हुई, कर्मचारी अपने वेतन बढ़ाने व दूसरी जायज़ माँगें कर रहे थे, जिस पर सरकार को अन्त में झुकना पड़ा, लेकिन जब इसे लागू करने की बात आयी तो ये खजाना खाली होने का रोना रोने लगे और कहा कि सरकार के पास इतना बजट नहीं। लेकिन अपने 'सदाचारी' व 'ईमानदार' 'आम आदमी' के प्रतिनिधियों के लिए सरकार का खज़ाना कुबेर के ख़जाने की तरफ भरा है और सरकार उन पर खुले दिल से मेहरबान है।

मेहनतकशों को भ्रम के जाल में फँसाने वाले इस बहरूपिये की असलियत आज आम जनता के सामने आ रही है और आज हमें ये समझाना पड़ेगा कि किसी और चुनावी मदारी की तरह ही ये भी आम मेहनतकश जनता और मज़दूरों का उतना ही बड़ा दुश्मन है और सही मायने में उनसे ज्यादा ख़तरनाक है क्योंकि ये आम आदमी का मुखौटा लगाकर हमारी पीठ में छुरा घोंप रहा है।

**- अमित**

*"बुर्जुआ अख़बार पूँजी की विशाल राशियों के दम पर चलते हैं। मज़दूरों के अख़बार ख़ुद मज़दूरों द्वारा इकट्ठा किये गये पैसे से चलते हैं।"* **- लेनिन**

**'मज़दूर बिगुल' मज़दूरों का अपना अख़बार है।**

**यह आपकी नियमित आर्थिक मदद के बिना नहीं चल सकता।**

**बिगुल के लिए सहयोग भेजिये/जुटाइये।**

**सहयोग कूपन मँगाने के लिए मज़दूर बिगुल कार्यालय को लिखिये।**

**मज़दूर बिगुल के लिए अपने कारख़ाने, दफ़्तर या बस्ती की रिपोर्टें, लेख, पत्र या सुझाव आप इन तरीक़ों से भेज सकते हैं:**

डाक से भेजने का पता: **मज़दूर बिगुल, द्वारा जनचेतना, डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020**

ईमेल से भेजने का पता: **bigulakhbar@gmail.com**

## मज़दूर बिगुल की वेबसाइट

**www.mazdoorbigul.net**

**इस वेबसाइट पर दिसम्बर 2007 से अब तक बिगुल के सभी अंक क्रमवार उससे पहले के कुछ अंकों की सामग्री तथा राहुल फ़ाउण्डेशन से प्रकाशित सभी बिगुल पुस्तिकाएँ उपलब्ध हैं। बिगुल के प्रवेषांक से लेकर अब तक के सभी अंक वेबसाइट पर क्रमषः उपलब्ध कराये जा रहे हैं।**

**आप इस फ़ेसबुक पेज के ज़रिये भी 'मज़दूर बिगुल' से जुड़ सकते हैं:**
**www.facebook.com/MazdoorBigul**

## 'मज़दूर बिगुल' का स्वरूप, उद्देश्य और ज़िम्मेदारियाँ

**1. 'मज़दूर बिगुल' व्यापक मेहनतकश आबादी के बीच क्रान्तिकारी राजनीतिक शिक्षक और प्रचारक का काम करेगा। यह मज़दूरों के बीच क्रान्तिकारी वैज्ञानिक विचारधारा का प्रचार करेगा और सच्ची सर्वहारा संस्कृति का प्रचार करेगा। यह दुनिया की क्रान्तियों के इतिहास और शिक्षाओं से, अपने देश के वर्ग संघर्षों और मज़दूर आन्दोलन के इतिहास और सबक से मज़दूर वर्ग को परिचित करायेगा तथा तमाम पूँजीवादी अफवाहों-कुप्रचारों का भण्डाफोड़ करेगा।**

**2. 'मज़दूर बिगुल' भारतीय क्रान्ति के स्वरूप, रास्ते और समस्याओं के बारे में क्रान्तिकारी कम्युनिस्टों के बीच जारी बहसों को नियमित रूप से छापेगा और 'बिगुल' देश और दुनिया की राजनीतिक घटनाओं और आर्थिक स्थितियों के सही विश्लेषण से मज़दूर वर्ग को शिक्षित करने का काम करेगा।**

**3. 'मज़दूर बिगुल' स्वयं ऐसी बहसें लगातार चलायेगा ताकि मज़दूरों की राजनीतिक शिक्षा हो तथा वे सही लाइन की सोच-समझ से लैस होकर क्रान्तिकारी पार्टी के बनने की प्रक्रिया में शामिल हो सकें और व्यवहार में सही लाइन के सत्यापन का आधार तैयार हो।**

**4. 'मज़दूर बिगुल' मज़दूर वर्ग के बीच राजनीतिक प्रचार और शिक्षा की कार्रवाई चलाते हुए सर्वहारा क्रान्ति के ऐतिहासिक मिशन से उसे परिचित करायेगा, उसे आर्थिक संघर्षों के साथ ही राजनीतिक अधिकारों के लिए भी लड़ना सिखायेगा, दुअन्नी-चवन्नीवादी भूजाछोर "कम्युनिस्टों" और पूंजीवादी पार्टियों के दुमछल्ले या व्यक्तिवादी-अराजकतावादी ट्रेडयूनियनों से आगाह करते हुए उसे हर तरह के अर्थवाद और सुधारवाद से लड़ना सिखायेगा तथा उसे सच्ची क्रान्तिकारी चेतना से लैस करेगा। यह सर्वहारा की कतारों से क्रान्तिकारी भरती के काम में सहयोगी बनेगा।**

**5. 'मज़दूर बिगुल' मज़दूर वर्ग के क्रान्तिकारी शिक्षक, प्रचारक और आह्वानकर्ता के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनकर्ता और आन्दोलनकर्ता की भी भूमिका निभायेगा।**

प्रिय पाठको,

बहुत से सदस्यों को 'मज़दूर बिगुल' नियमित भेजा जा रहा है, लेकिन काफ़ी समय से हमें उनकी ओर से न कोई जवाब नहीं मिला और न ही बकाया राशि। आपको बताने की ज़रूरत नहीं कि मज़दूरों का यह अख़बार लगातार आर्थिक समस्या के बीच ही निकालना होता है और इसे जारी रखने के लिए हमें आपके सहयोग की ज़रूरत है। अगर आपको 'मज़दूर बिगुल' का प्रकाशन ज़रूरी लगता है और आप इसके अंक पाते रहना चाहते हैं तो हमारा अनुरोध है कि आप कृपया जल्द से जल्द अपनी सदस्यता राशि भेज दें। आप हमें मनीआर्डर भेज सकते हैं या सीधे बैंक खाते में जमा करा सकते हैं।

**मनीऑर्डर के लिए पता:**
**मज़दूर बिगुल, द्वारा जनचेतना**
**डी-68, निरालानगर, लखनऊ-226020**

**बैंक खाते का विवरणः Mazdoor Bigul**
**खाता संख्याः 0762002109003787, IFSC: PUNB0076200**
**पंजाब नेशनल बैंक, निशातगंज शाखा, लखनऊ**

**सदस्यताः वार्षिक: 70 रुपये (डाकख़र्च सहित); आजीवन: 2000 रुपये**

**मज़दूर बिगुल के बारे में किसी भी सूचना के लिए आप हमसे इन माध्यमों से सम्पर्क कर सकते हैंः**

**फ़ोनः 0522-2786782, 8853093555, 9936650658**
**ईमेलः bigulakhbar@gmail.com**
**फ़ेसबुकः www.facebook.com/MazdoorBigul**


## मज़दूर बिगुल

| | |
|---|---|
| सम्पादकीय कार्यालय | : 69 ए-1, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006 फ़ोन: 8853093555 |
| दिल्ली सम्पर्क | : बी-100, मुकुन्द विहार, करावलनगर, दिल्ली-94, फ़ोन: 011-64623928 |
| ईमेल | : bigulakhbar@gmail.com |
| मूल्य | : एक प्रति - रु. 5/- वार्षिक - रु. 70/- (डाक ख़र्च सहित) आजीवन सदस्यता - रु. 2000/- |

# मारुति के ठेका मजदूरों द्वारा वेतन बढ़ोत्तरी की माँग पर प्रबन्धन से मिली लाठियाँ!

## ठेका, कैज़ुअल, ट्रेनी, स्थायी का भेद भुलाकर व्यापक मज़दूर एकता क़ायम करनी होगी

बीते दिनों देश की एक बड़ी कार निर्माता कम्पनी मारुति ने अपने स्थायी मज़दूरों की पगार में भरी भरकम वृद्धि की। हर तीन साल पर होने वाले वेतन बढ़ोत्तरी के समझौते के तहत यह वृद्धि की गयी। पिछली बार सन 2012 में मारुति की फैक्ट्री में घटी घटना और मजदूरों के आन्दोलन के बाद जब यह प्लांट नये श्रमिकों के साथ दुबारा शुरू हुआ था तब से यह वेतन के सम्बन्ध में मजदूरों के साथ किया गया दूसरा समझौता है, इससे पहले किया गया समझौता इस साल के मार्च महीने तक मान्य था। पिछली बार भी तकरीबन 18,000 तक वेतन बढ़ोत्तरी का समझौता किया गया था। इस बार यह औसतन 16,800 मासिक का किया गया है, जो कि पिछले बार से 7 प्रतिशत कम है। 38% तक की यह वृद्धि अप्रैल 2015 से मार्च 2018 तक की अवधि के लिए है। इस बढ़ोत्तरी के बाद स्थायी कर्मचारियों की मासिक आय पचास हज़ार तक पार कर गयी है। इससे पहले भी बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ अपने कुल श्रमिकों के एक छोटे से हिस्से के वेतन में 15 से 18 हज़ार तक की बढ़ोत्तरी करती रही हैं।

हर कारखाने की तरह मारुति में भी उत्पादन की प्रक्रिया में संलग्न बहुतायत आबादी की आय में वृद्धि तक़रीबन नगण्य है। कारखाने में कार्यरत मज़दूरों का बड़ा हिस्सा स्थायी मज़दूरों का नहीं बल्कि ठेके पर काम कर रहे कॉन्ट्रैक्ट, कैज़ुअल, ट्रेनी मज़दूरों का है। ठेके पर काम कर रहे मजदूरों और स्थायी कर्मचारियों के काम की प्रकृति में कोई अन्तर नहीं होता। इसके बावजूद इनके वेतन में ज़मीन-असमान का अन्तर है। मारुति मैनेजमेंट और मारुति फैक्ट्री की यूनियनों के बीच हुए समझौते में ठेके पर काम कर रहे इन मज़दूरों के मुद्दों और माँगों को नहीं उठाया गया। स्थायी मज़दूरों के पगार में बढ़ोत्तरी के बाद जब मानेसर प्लांट के ठेके पर काम कर रहे कर्मचारियों ने भी पगार बढ़ाने के लिए अपनी आवाज़ उठाई तब उन पर मारुति प्रसाशन ने गुण्डों-बाउंसरों और पुलिस वालों की मदद से बर्बर लाठीचार्ज करवा दिया।

मजदूरों पर हुए इस बर्बर लाठीचार्ज के खिलाफ़ मजदूरों का सगा होने की कसमें खाने वाली केन्द्रीय ट्रेड यूनियनों ने कुछ नहीं किया। वैसे तो केंद्रीय ट्रेड यूनियनों की गद्दारी और मज़दूर विरोधी चरित्र जगजाहिर है किन्तु इस घटना के बाद फैक्ट्रियों की स्वतंत्र यूनियनों का चरित्र भी साफ़ दिख गया है। मारुति से जुडी स्थायी मज़दूरों की यूनियनों मारुति सुजुकी वर्कर्स यूनियन, मारुति सुजुकी उद्योग कामगार यूनियन और सुजुकी पॉवरट्रेन इंडिया एम्प्लाइज़ यूनियन का ठेके पर काम कर रहे मजदूरों के प्रति उदासीन रुख भी इस घटना के बाद साफ़ दिखता है। ऐसी यूनियन मज़दूरों की ताक़त नहीं बल्कि मैनेजमेंट की चाकर ज्यादा प्रतीत होती है। लाठीचार्ज की घटना के बाद घड़ियाली आँसू बहाने के बाद यह यूनियन मुर्गा-दारू पार्टी में ज्यादा व्यस्त हो गयी थी। इसीलिए इनमें से किसी भी यूनियन ने अपने ही साथ काम करने वाले मजदूरों पर हुए बर्बर लाठीचार्ज के खिलाफ़ कोई कार्रवाई करना ज़रूरी नहीं समझा। सबसे पहले यह बात समझने की ज़रूरत है कि क्यों बड़ी कंपनियाँ जो सारा मुनाफ़ा मज़दूरों की हड्डी का चूरा बनाकर पैदा करती हैं, मज़दूरों के एक हिस्से को बाकी मज़दूरों से अधिक वेतन दे रही हैं। अन्य मज़दूरों के मुकाबले कुछ मज़दूरों की इस भारी पगार को देख कर कहीं किसी को यह भ्रम भी हो सकता है कि पूँजीवाद के तहत वाकई मज़दूरों के "अच्छे दिन" आ सकते हैं। हालाँकि प्रदर्शन कर रहे मज़दूरों के ऊपर लाठीचार्ज ही असल सच्चाई है। मारुति जैसी कम्पनियाँ जिनका मुनाफ़ा अरबों में होता है वह अपने मुनाफ़े का एक छोटा सा हिस्सा स्थायी मज़दूरों को देकर दरअसल एक ही फैक्ट्री में एक ही जैसा काम कर रहे मज़दूरों के बीच एकता स्थापित होने से रोकने और उन्हें बाँटने के लिए करती है जिससे फैक्ट्री में अपने अधिकारों के लिए मज़दूर एकजुट न हों। मारुति ने वित्तीय वर्ष 2015 में 3711 करोड़ का मुनाफ़ा कमाया है। मारुति जैसी कंपनियाँ जिनका उत्पादन पूरे सेक्टर में फैला हुआ है, जो महज अपने कारखाने के मज़दूरों का शोषण नहीं करती है, बल्कि अपनी सैकड़ों वेंडर कंपनियों में मात्र 5500-5800 पर काम करने वाले कई हज़ार मज़दूरों की मेहनत को लूटती हैं उनके लिए यह ज़रूरी बन जाता है कि वह अपने मज़दूरों के बीच अन्तर बना कर रखे और उन्हें बाँटकर रखें। निश्चित रूप से अलग-अलग वेंडर कंपनियों में काम कर रहे श्रमिक भी मारुति के ही श्रमिक हैं, जिन्हे काम के बिखराने के साथ एक-दूसरे से भी अलग कर दिया जाता है। यानि मारुति जैसी कंपनियाँ महज़ अपने प्लांट के ही नहीं बल्कि पूरे सेक्टर के मज़दूरों की मेहनत को लूटती हैं। मज़दूरों को एक-दूसरे से अलग करने के अलावा वह उनमें अलग-अलग संस्तर भी पैदा करती हैं, क्योंकि पूँजी की ताक़तों को एक ही चीज से भय लगता है और वह है मज़दूरों की संगठित ताक़त। इसीलिए जब यह बड़ी बड़ी कंपनियाँ पूरे सेक्टर के मज़दूरों को लूटती हैं तब वह मज़दूरों के एक छोटे से टुकड़े को, बाकी मज़दूरों की मेहनत से निचोड़े हुए अधिशेष से एक हिस्सा फ़ेंक देती हैं ताकि मज़दूरों के बीच अन्तर पैदा किया जा सके। मज़दूर वर्ग के एक छोटे से टुकड़े को रिश्वत देकर उन्हें व्हाइट कॉलर वर्कर बना दिया जाता है। मज़दूर वर्ग के संघर्ष की धार को भोथरा करने का यह एक हथकंडा है।

इसका मुक़ाबला करने के लिए मज़दूर वर्ग को कॉन्ट्रैक्ट, कैज़ुअल, ट्रेनी, स्थायी मज़दूर की श्रेणियों से ऊपर उठकर अपने आपको वर्ग के रूप में संगठित करना होगा और संघर्ष करना होगा। मज़दूरों को यह समझना पड़ेगा कि उनके बीच यह दीवार मालिकों ने उनके अपने हित को साधने के लिए खड़ी की है। इसीलिए इस दीवार का गिरना ज़रूरी है।

स्थायी मज़दूरों को कभी नहीं भूलना चाहिए कि कंपनियाँ हमेशा स्थायी मज़दूरों की संख्या कम करने की, अस्थायीकरण की ताक़ में रहती हैं, और अपने फायदे के हिसाब से उनका इस्तेमाल करती है। उन्हें जुलाई 2012 में मारुति की घटना को नहीं भूलना चाहिए जिसके बाद कंपनी ने थोक भाव से स्थायी मज़दूरों को काम से निकाला था। उनका वर्ग हित अपने वर्ग भाइयों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर लड़ने में है। पूरे सेक्टर में लगातार बढ़ते ठेकाकरण, छँटनी, नये स्थायी मज़दूरों की बहाली न होना, ठेका मज़दूरों से ज़्यादा उनके लिए खतरे की घंटी है। यह दिखाता है कि स्थायी मज़दूरों का दायरा सिकुड़ता जा रहा है। पूँजीपतियों के इन "अच्छे दिनों" में जहाँ एक-एक कर मज़दूरों के अधिकारों पर हमले हो रहे हैं वहाँ यह कोई बड़ी बात नही होगी कि एक ही झटके में स्थायी मज़दूरों का पत्ता काटकर कारखानों-उद्योगों में शत प्रतिशत ठेकाकरण कर दिया जाये। इसीलिए मारुति ही नहीं बल्कि पूरे सेक्टर के स्थायी मज़दूरों के लिए ज़रूरी है कि वे अपने संकीर्ण हितों से ऊपर उठकर ठेकेदारी प्रथा के ख़िलाफ़ अपनी आवाज़ बुलन्द करें और एक वर्ग के तौर पर एकजुट होकर संघर्ष करें।

वहीं मारुति में ठेके पर काम कर रहे मज़दूरों को समझना पड़ेगा कि उनकी एकता आज पूरे सेक्टर के मज़दूरों के साथ बनती है। सैकड़ो वेंडर कंपनियों में बेहद खस्ताहाल में काम कर रहे श्रमिक असल में उनके ही भाई हैं। सनबीम, रीको, जेबीएम, कृष्णा मारुति, ब्रिजस्टोन, टलब्रोस जैसी तमाम वेंडर कंपनियाँ जो असल में मारुति, हीरो, होंडा, हुंडई, निसान सरीखी बड़ी कंपनियों के लिए काम करती हैं इनमे काम कर रहा हरएक मज़दूर अपने काम से, वर्ग हित से एक दूसरे से जुड़ा हुआ है और इसीलिए अपने अधिकारों को हासिल करने के लिए इनका संघर्ष भी एक है। आज किसी भी माँग या संघर्ष का चरित्र कारखाना केंद्रित नहीं बल्कि सेक्टर केंद्रित बनता है। इसीलिए आज पूरे सेक्टर के पैमाने पर एकजुट होकर संघर्ष करने की ज़रूरत है। इसीलिए आज सिर्फ अपने आपको कारखाना केंद्रित यूनियन में संगठित करने से संघर्ष न ही लड़ा जा सकता है और न ही जीता जा सकता है। इसीलिए पूरे सेक्टर के पैमाने पर बनी यूनियन ही आज के समय की ज़रूरत को पूरा कर सकने में सक्षम साबित हो सकती है। आज गुडगाँव-मानेसर-धारूहेड़ा-बावल की औद्योगिक पट्टी में 'ऑटोमोबाइल इंडस्ट्री कॉन्ट्रैक्ट वर्कर्स यूनियन' ऐसी ही एक यूनियन है। यह यूनियन किसी भी चुनावबाज़ पार्टी से कोई ताल्लुक नहीं रखती है। यह मज़दूरों की पहलकदमी से बनी एक स्वतंत्र क्रान्तिकारी सेक्टरगत यूनियन है और मारुति मजदूरों पर हुए बर्बर लाठीचार्ज के ख़िलाफ़ ऑटोमोबाइल इंडस्ट्री कॉन्ट्रैक्ट वर्कर्स यूनियन ने पर्चा वितरण करके पूरे सेक्टर के मज़दूरों से अपने हक़-अधिकारों के लिए संघर्ष के वास्ते एकजुट होने का आह्वान किया। क्योंकि अपनी क्रांतिकारी सेक्टरगत यूनियन के बिना अलग-अलग कारखानों में होने वाले मज़दूरों के संघर्ष किसी फैसलाकुन अंजाम तक नहीं पहुँच पायेंगे।

**— अनन्त**

# "कहाँ गये वो वायदे, सुखों के ख़्वाब क्या हुए?"

## दिल्ली इस्पात उद्योग मज़दूर यूनियन के नेतृत्व में वज़ीरपुर के मज़दूरों और झुग्गीवासियों ने किया विधायक का घेराव

वज़ीरपुर में लगभग एक महीने से पानी की किल्लत झेल रहे वज़ीरपुर के मज़दूरों और झुग्गीवासियों ने 30 सितम्बर की सुबह वज़ीरपुर के विधायक राजेश गुप्ता का घेराव किया। वज़ीरपुर के अम्बेडकर भवन के आस पास की झुग्गियों में खुदाई के चलते 12 दिनों से पानी नहीं पहुँच रहा है, इस समस्या को लेकर मज़दूर पहले भी विधायक के दफ्तर गए थे जहाँ उन्हें 2 दिन के भीतर हालात बेहतर करने का वादा करते हुए लौटा दिया गया था मगर इसके बावजूद आम आदमी पार्टी की सरकार के विधायक ने कुछ नहीं किया । 30 सितम्बर की सुबह दिल्ली इस्पात उद्योग मज़दूर यूनियन के नेतृत्व में झुग्गीवासीयों और मज़दूरों ने इकट्ठा होकर राजेश गुप्ता का घेराव किया। चुनाव से पहले 700 लीटर पानी का वादा करने वाली इस सरकार के नुमाइंदे से जब यह पूछा गया कि पिछले 12 दिनों से कनेक्शन कट जाने के बाद पानी की सुविधा के लिए पानी के टैंकर क्यों नहीं मंगवाये गए तो उसपर विधायक जी ने मौन धारण कर लिया।

दूसरी तरफ पानी का निजीकरण करके दिल्ली के गरीबों को अब 5 रुपये में 20 लीटर पानी बेचा जाएगा । 20 हजार लीटर प्रति माह पानी नि:शुल्क देने का वादा करने वाली ''आम आदमी'' की सरकार अब 29 अनधिकृत कॉलोनियों में रहने वाले कमजोर वर्गों के निवासियों को इस महंगी दर पर पानी बेचेगी। इसी के तहत 30 सितम्बर 2015 को हैदराबाद की एक कंपनी मेसर्स वॉटर हैल्थ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड को इस कार्य का ठेका दे दिया गया है। नियमानुसार कोई भी ठेका देने के लिये सरकार को कम से कम तीन कंपनियों से ठेके के लिए टेंडर लेने चाहिए और इनमे से किसी एक का चुनाव करना चाहिए। मगर इन सब नियमो को ताक पर रखते हुए सरकार ने अपनी मनमर्ज़ी से यह ठेका इस कंपनी को दिया। इस से ज़्यादा ज़रूरी और अहम बात तो ये है कि पानी जैसी बुनियादी सुविधा किसी भी व्यक्ति के बुनियादी जीवन अधिकारों में शुमार है और हर नागरिक को पानी मुहैया कराने की ज़िम्मेदारी सरकार की है। इस बुनियादी ज़रूरत को एक माल बना कर उसे निजी कंपनियों के हवाले कर देने की इस घटना से ही साफ़ हो जाता है कि खुद को आम आदमी की सरकार कहने वाली इस सरकार का वास्तव में आम आदमी की ज़िन्दगी के हालातों से दूर दूर तक कोई लेना देना नही है। दिल्ली भर में केवल 81 फीसदी ऐसी रिहाईशें हैं जिनके पास पाइपलाइन द्वारा कनेक्शन है इसके इलावा झुग्गियों और बस्तियों में जहाँ दिल्ली की आम मेहनतकश आबादी रहती हैं वहाँ पानी पहुँचाने की कोई ठोस सुविधा मौजूद नहीं हैं। दिल्ली जल बोर्ड ने अपने बजट में पाइपलाइन बिछाने का कोई प्रस्ताव नहीं रखा है बल्कि 250 नए वाटर टैंकर खरीदने की बात की है। दिल्ली में अभी जल की आपूर्ति के लिए 1000 मिलियन गैलन पानी की जरुरत है और अनुमानतः 2017 यह बढ़कर 1400 मिलियन गैलन हो जायेगा। पर दिल्ली जल बोर्ड अभी बस 800 मिलियन गैलन पानी ही सप्लाई करती है। चुनाव से पहले 'बिजली हाफ पानी माफ़' का नारे देकर और ईमानदार राजनीति करने का वादा करके अरविन्द केजरीवाल ने सत्ता तो हासिल कर ली मगर सत्ता में आने के बाद एक एक कर वो दिल्ली की आम जनता से किये वादों से मुकर रहे हैं। चाहे वह आम जनता से किये बिजली या पानी से जुड़े वादे हो, झुग्गीवासियों को पक्के मकान देने का वादा हो या मज़दूरों से ठेका प्रथा ख़त्म करने का वादा हो। 'जल स्वराज' की बात करके सत्ता में पहुची आम आदमी पार्टी सरकार सच्चाई जनता के सामने बिलकुल साफ़ हो रही है की यह कांग्रेस व भाजपा से कोई अलग पार्टी नहीं है बल्कि उससे ज्यादा ख़तरनाक है जो आम आदमी का मुखौटा पहने नाम तो झुग्गीवालों और मजदूरों का लेती है पर उसकी पीठ में छुरा घोपने का काम करती है। इनकी आम आदमी की परिभाषा में मजदूर और झुग्गीवासी शामिल नहीं हैं।

**– अविनाश**

# मानेसर की ब्रिजस्टोन कम्पनी के मज़दूरों का संघर्ष ज़िन्दाबाद !

देश की बड़ी-बड़ी कार कंपनीयों के लिए पुर्जे बनाने वाली ब्रिजस्टोन इंडिया प्रोडक्ट्स प्राइवेट लिमिटेड, मानेसर के श्रमिक अपने यूनियन बनाने के अधिकार को लेकर संघर्ष कर रहे हैं। यह कंपनी ब्रिजस्टोन कारपोरेशन, जापान की सहायक कंपनी है। यहाँ गाड़ियों के कम्पन विरोधी पुर्ज़े (एंटी-वाइब्रेशन प्रोडक्ट्स) बनते हैं।

गुडगाँव-मानेसर-धारूहेड़ा-बवाल तक फैली ऑटोमोबाइल सेक्टर की औद्योगिक पट्टी में दुनिया की नामी-गिरामी ब्रांड की गाड़ियों और उनके पूर्जों का उत्पादन हज़ारों औद्योगिक इकाईयों में होता हैं। देश की अर्थव्यवस्था में मुख्य हिस्सेदारी इस पट्टी से आती है। लकिन इस पट्टी में तेज रफ़्तार वाहनों का निर्माण करने वाले मज़दूरों की ज़िन्दगी के हालात बहुत बदतर हैं। ब्रिजस्टोन इंडिया के मज़दूर पिछले छह महीने से यूनियन बनाने की कवायद में जुटे थे। मज़दूरों के द्वारा यूनियन बनाने की प्रक्रिया में प्रबंधन ने शुरू से ही बाधा पहुँचाने का काम किया। ब्रिजस्टोन कम्पनी के मज़दूर 'ब्रिजस्टोन इंडिया ऑटोमोटिव एम्प्लाइज यूनियन' नामक अपनी यूनियन को पंजीकृत कराना चाहते थे। जब मज़दूर पहली बार यूनियन बनाने के लिए एकजुट हुए, तब भी कम्पनी के जेनरल मनेजर मनोज मनचंदा ने उनमे से कुछ कमज़ोर मज़दूरों को खरीद कर इस प्रक्रिया पर विराम लगाने की कोशिश की थी। किन्तु मज़दूरों ने हार नहीं मानी और एक बार फिर नए नेतृत्व के साथ सावधानी से नए सिरे से यूनियन निर्माण की प्रक्रिया में जुट गए। उन्होंने अलग-अलग जगह बैठकें की। यूनियन पंजीकरण के लिए ज़रूरी दो जनरल बॉडी मीटिंग, दिनांक 12 अप्रैल 2015 और 31 मई 2015 को की गयी। कंपनी प्रबंधन को इस बात की जानकारी लेबर विभाग के भ्रष्ट अधिकारिओं की मदद से मिल गयी। उन्होंने फ़र्ज़ी दस्तावेज़ से यह साबित करने की कोशिश की कि बैठक में शामिल हुए 31 मज़दूरों में से 11 काम पर मौजूद थे, ओवर टाइम कर रहे

थे। इस लिए इन बैठकों को फ़र्ज़ी माना जाए। इस कारखाने में तक़रीबन 180 स्थायी मज़दूर काम करते हैं, इस लिहाज़ से भी यदि अगर बैठक में महज 20 लोग भी शामिल हैं तो वे यूनियन पंजीकरण के योग्य हैं। इस आधार पर लेबर कमिसनर ने प्रक्रिया आगे बढ़ाते हुए फाइल डिप्टी लेबर कमिसनर अनुपम मालिक को सौंपी। इसके बाद आगे की करवाई मंद पड़ गयी। न ही कोई वैध कारण बता कर यूनियन रजिस्ट्रेशन की प्रक्रिया रद्द की और न ही पंजीकरण संख्या ज़ारी किया गया।

वहीँ दूसरी तरफ सत्यापन तिथि के बाद से मैनेजमेंट ने प्रक्रियाधीन यूनियन के मनोनीत पदाधिकारी कृष्ण मुरारी और शिवपूजन को बिना किसी नोटिस के चेन्नई प्लांट ट्रान्सफर कर दिया। उनके द्वारा मना करने पर उन्हें काम से निकाल दिया गया। प्रबंधन ने चुन चुन कर बीसियों श्रमिकों को काम से बहार का रास्ता दिखाया। इन सब के विरोध में मज़दूरों ने कोर्ट से परमिशन लेकर 17 सितम्बर को टूल डाउन किया। उस दिन उन्हें पुलिस और गुंडों के दम पर कंपनी से बाहर कर दिया गया। मज़दूरों के एक दिन के टूल डाउन के जवाब में अगले दिन कंपनी ने गैर-कानूनी तालाबंदी कर दी। अगले दिन जब श्रमिक सुबह की शिफ्ट में काम पर आये, तब गेट पर पुलिस और बाउंसरों के साथ खड़े मैनेजमेंट ने उन्हें अंदर जाने से रोका। श्रमिकों से कहा गया की उन्हे आधे घंटे बाद बताया जायेगा की उन्हें काम पर लिया जायेगा या नहीं। जब दुबारा श्रमिक गेट पर पहुंचे तब बाउंसरों ने 4 श्रमिकों को अंदर खिंच लिया। उन्हें धमकी दी गयी की या तो वे काम करें या कोरे कागज़ पर दस्तख़त कर निकल जाए। इसके बाद तक़रीबन 400 श्रमिकों ने वहीं कंपनी गेट से थोड़ी दूरी पर टेंट लगाकर हड़ताल शुरू कर दी। श्रमिकों ने मांग की कि बाहर निकाले गए 20 मज़दूरों समेत सभी को काम पर वापिस लिया जाये और यूनियन बनाने दिया जाये। इसके बाद प्रबंधन पुलिस वालों को भेज कर मज़दूरों पर दबाव बनाने का काम कर रही थी। वहीं दूसरी तरफ काम पर आई महिला मज़दूरों के साथ बदसलूकी की गई। कारखाने में तक़रीबन 40 -45 महिला श्रमिक हैं। उनसे जबरन मोल्डिंग का काम करवाया गया, जिसके बारे में महिलाओं को कोई जानकारी नही है। महिला मज़दूर आम तौर पर डफ्लैशिंग का काम करतीं हैं पर फैक्ट्री प्रबंधन ने बलपूर्वक उन से पुरुष श्रमिकों द्वारा किये जाने वाला काम करवाया। यहाँ तक की उन्हें फैक्ट्री परिसर में झाड़ू-पोछे करने तक के लिए मज़बूर किया गया। अगले दिन महिला श्रमिकों ने भी हड़ताली मज़दूरों का साथ देने का निर्णय किया। ऑटोमोबाइल इंडस्ट्री कॉन्ट्रेक्ट वर्कर्स यूनियन ब्रिजस्टोन के मजदूरों के संघर्ष में उनका समर्थन कर रही है। ऑटोमोबाइल इंडस्ट्री कॉन्ट्रेक्ट वर्कर्स यूनियन के अनंत ने बताया कि मजदूरों द्वारा यूनियन बनाने के अधिकार को कुचलने का यह कोई पहला मामला नही है। इससे पहले भिवाड़ी में श्री राम पिस्टन के मजदूरों ने भी यूनियन बनाने के मांग को लेकर हड़ताल की थी फर्क बस इतना था कि श्री राम पिस्टन कम्पनी राजस्थान के भिवाड़ी में स्थित है और ब्रिजस्टोन हरियाणा के मानेसर में। मजदूरों की हालत हर जगह एक सी है। अपने खून पसीने से चम चमाती गाड़ियाँ बनाने वाले इन मजदूरों की ज़िन्दगी में अँधेरे, भूख और गरीबी के अलावा कुछ नही है। आज के समय में मजदूरों को अपनी एक सेक्टरगत यूनियन बनाने की ज़रूरत है जो कि उस सेक्टर में काम कर रहे सभी मजदूरों के अधिकारों के लिए संघर्ष करे। रिपोर्ट लिखे जाने तक ब्रिजस्टोन कंपनी के मज़दूर अपने हक़-अधिकारों के लिए संघर्षरत हैं और फैक्ट्री के बाहर हड़ताल पर बैठे हैं।

**– बिगुल संवाददाता**

# हरियाणा में बिजली के बढ़े हुए दामों के विरोध में प्रदर्शन!

नौजवान भारत सभा के बैनर तले आज बिजली के बढ़े हुए दामों के मुद्दे पर विरोध प्रदर्शन का आयोजन किया गया. शहर भर से आम आबादी बड़ी संख्या में उक्त प्रदर्शन में शामिल हुई. नौभास के संयोजक रमेश खटकड़ ने बताया कि हरियाणा में पिछले एक साल के अन्दर बिजली के दामों में बढ़ोत्तरी हुई है। अलग-अलग मदों में की गयी दामों की बढ़ोत्तरी 30 से 100 प्रतिशत तक की है। ध्यान रहे यह वही भाजपा है जो दिल्ली में चुनाव से पहले 30 प्रतिशत बिजली के दाम कम करने की बात कर रही थी। मोदी-खट्टर चुनाव में शोर मचा रहे थे ''बहुत हुई महँगाई की मार, अबकी बार मोदी सरकार'। लेकिन सत्ता में आने बाद भाजपा सरकार ने महँगाई के सारे रिकार्ड ध्वस्त कर दिये हैं। मोदी सरकार ने 1.5 साल में ही रेल किराये में 14 प्रतिशत बढ़ोत्तरी कर दी, सभी वस्तुओं व सेवाओं पर सर्विस टैक्स को 14.6 प्रतिशत कर दिया। साथ ही दालों से लेकर प्याज के रेट आज आसमान छू रहे हैं। आज महँगाई की मार ने मध्यमवर्ग आबादी की भी कमर तोड़ दी है। अब जले पर नमक छिड़कते हुए बिजली के दामों को बढ़ाकर जनता की जेब पर सरेआम डाकेजनी है। ऐसे में पहले से ही महँगाई की मार झेल रही जनता के लिए यह 'जले पर नमक छिड़कने' के समान है. वैसे तो सभी सरकारों ने जनता की शिक्षा, स्वास्थ्य और रोजगार जैसी बुनियादी ज़रूरतों को बाजार की अन्धी ताकतों के हवाले करने का काम किया है. अब भाजपा की सरकार इस प्रक्रिया को और भी तेज़ कर रही है. नरवाना शहर के लोग बिजली, सीवरेज, साफ़-सफ़ाई, स्वच्छ पेयजल आदि से जुड़ी समस्याओं से जूझ रहे हैं लेकिन सरकार की तरफ़ से केवल सूखी बयानबाजी ही हो रही है. शहर की जनता सरकार के द्वारा बिजली के दामों में की गयी बढ़ोत्तरी से बेहद क्षुब्ध है.

आज मोदी-खट्टर सरकार कांग्रेस की ही लूटेरी उदारीकरण-निजीकरण नीतियों को आगे बढ़ा रही है, असल में सभी चुनावी पार्टियों के झण्डे-नारे अलग दिखते हैं लेकिन सबकी नीतियां एक है- टाटा को एक नैनो कार पर 60 हजार रुपये की सब्सीडी मिलती है, मोदी के चुनाव प्रचार का खर्च उठाने वाले गौतम अदानी को सरकार ने हज़ारों एकड़ जमीन 1 रुपये के हिसाब से दी है। साथ ही मोदी सरकार ने 5.90 लाख करोड़ की छूट बजट में दी है। जबकि जनता के बुनियादी शिक्षा, स्वास्थ्य पर बजट का मात्र 2 प्रतिशत खर्च करती है वही खट्टर सरकार ने शिक्षा, खेल और कला के लिए बजट का मात्र 1.7 प्रतिशत खर्च किया है। जबकि दूसरी तरफ हरियाणा के आम गरीब किसानों की हालत बद से बदतर होती जा रही है। बिजली, डीजल से लेकर खाद के दाम बढ़ रहे हैं। छोटी खेती वाले किसानों की फसलें लगातार बर्बाद होने के कारण ऋण के बोझ तले दबकर आम गरीब किसान आत्महत्या करने को मज़बूर हैं। सरकार बड़े ऋण भी धनी किसान आबादी को देती है ऐसे में साफ है सभी चुनावी पार्टियों की नीति है- ''पूँजीपतियों को पूजो आबाद करो, मेहनतकशों को लूटो बर्बाद करो।''

नौजवान भारत सभा के अजय ने कहा कि क्या अब सरकारों का काम जनता से टैक्स वसूलना ही रह गया है? बिजली के मामले में मौजूदा सरकार जनता की मेहनत की कमाई से पाई-पाई निचोड़कर बिजली कम्पनियों से जुड़े पूँजीपतियों के वारे-न्यारे कर रही है. नरवाना की समस्त जनता खट्टर सरकार के इस जन-विरोधी कदम की कड़े शब्दों में निन्दा करती है और सरकार से यह माँग करती है कि सरकार अपने इस जन-विरोधी कदम को बिना शर्त वापस ले और सबको 24 घण्टे सस्ती बिजली मुहैया कराये. तथा साथ ही मौजूदा बढ़े हुए बिलों में सुधार किया जाये, फ्यूल चार्ज के नाम पर की जा रही धाँधली बन्द की जाये. यदि सरकार अपने जनविरोधी क़दम पीछे नहीं हटाती तो जनान्दोलन को और भी तेज किया जायेगा. अन्त में उक्त प्रदर्शन व धरने के द्वारा एस. डी. एम. के माध्यम से बिजली मन्त्री और मुख्यमन्त्री तक भी अपनी न्यायसंगत माँगों को पहुँचाया गया।

# सनातन संस्था - फासीवादी सरकार की शह में फलता-फूलता आतंकवाद

हाल ही में महाराष्ट्र पुलिस ने भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के वरिष्ठ नेता व प्रगतिशील बुद्धिजीवी-लेखक कॉ. गोविन्द पानसरे की हत्या के आरोप में सनातन संस्था के "साधक" समीर गायकवाड को गिरफ्तार किया। महाराष्ट्र के वाशी और ठाणे में व गोवा के मडगाव में बम विस्फोट, उसके बाद कॉ. पानसरे की हत्या , ऐसी एक के बाद एक आतंकवादी कार्रवाइयों में सनातन संस्था के "साधकों" के हाथ होने के प्रमाण मिलने के बाद जहाँ एक तरफ सनातन संस्था पर प्रतिबन्ध लगाने की बात हो रही है तो दूसरी तरफ सनातन संस्था ने सभी हिन्दू धर्म "अभिमानियों" का सनातन संस्था की बदनामी के विरुद्ध एकजुट होने का आह्वान किया है। आज देश में पसर रही धार्मिक कट्टरपंथी लहर और उसे सरकार की तरफ से मिलती शह के बीच सनातन संस्था पर प्रतिबन्ध लगने की सम्भावना नहीं के बराबर है। पर इस बहाने सनातन संस्था कौन से "दैवीय राज्य" की स्थापना करना चाहती है, वो हमारे सामने आ गया है।

सनातन संस्था की स्थापना पेशे से सम्मोहन चिकित्सक जयंत आठवले ने 1990 में की थी। संस्था की वेबसाइट व अन्य जगहों पर दी गयी जानकारी के अनुसार इसका उद्देश्य अध्यात्म का अध्ययन विज्ञान के रूप में करना है। इसके लिए ये संस्थान 'सनातन प्रभात' नाम का अख़बार, धार्मिक साहित्य का अलग-अलग भाषाओं में प्रकाशन, नियमित सत्संग मेले व भव्य हिन्दू धर्म जागृति परिषद जैसे उपक्रम चलाती है। इसी के साथ ही दिसम्बर 2008 से श्री शंकरा नाम के चैनल पर सनातन संस्था व हिन्दू जनजागृति समिति ने मिलकर धर्मसत्संग व धर्मशिक्षणवर्ग (धर्म के बारे में समाज में लोगों को जागृत करना) नाम के दो कार्यक्रम प्रसारित करने शुरू किये। भारत के अनेक राज्यों और विदेशों में सनातन संस्था के केन्द्र हैं जो मासूम बच्चों से लेकर बुजुर्गों तक को हिन्दू धर्म के "विज्ञान" से परिचित करवाने, उन्हें संगठित करने व उनका धार्मिक "उन्नयन" करने का काम करते हैं। "हिन्दू राष्ट्र" की स्थापना करने को अपना ध्येय बताने वाली ये संस्था ये भी दावा करती है कि उनके साधकों पर किसी धर्म के मूल्य लादे नहीं जाते। "धर्मद्रोहियों" के खिलाफ लड़ाई को संस्था ने हमेशा ही अपना मुख्य कार्यभार माना है। "क्षत्रिय धर्म", "दुष्टों का नाश" जैसे शब्दों से आक्रामक धार्मिकता का प्रचार संस्था लगातार करती रही है। पहले केवल 'सनातन प्रभात' अख़बार के लेखों में शाब्दिक स्तर पर चल रहे इस धर्मयुद्ध को पहली बार 2008 में ठाणे व वाशी के नाटकघरों में जनता ने ठोस रूप में देखा। "आम्ही पाचपुते" नाम के मराठी नाटक में हिन्दू देवी देवताओं के तथाकथित अपमान के विरोध में 31 मई को वाशी के विष्णुकदास भावे नाटकघर में व उसके बाद 4 जून को ठाणे के गडकरी नाटकघर की पार्किंग में बम विस्फोट किये गये। इन विस्फोटों में 7 लोग घायल हुए। इस प्रकरण में संस्था के 6 साधकों को गिरफ्तार किया गया जिसमें से 4 को न्यायालय ने रिहा कर दिया व बाकी 2 को दस साल की सजा सुनाई। अभियुक्तों ने किसी संस्था की तरफ से विस्फोट किये हैं, ऐसा न्यायालय ने अपने फैसले में नहीं कहा। इसके बाद 2009 में गोवा के मडगाव में पुन: एक बम विस्फोट हुआ। दिवाली के पहले दिन उत्सव के रंग में रंगी भीड़ के बीच बम रखने जा रहे संस्था के दो साधक "मोक्ष" को प्राप्त हो गये और एक बार फिर पुलिस की नज़र संस्था की तरफ गयी। इस घटना में भी संस्था के पांच अन्य साधकों को पुलिस ने गिरफ्तार किया पर सबूतों के "अभाव" में वो छूट गये। रूद्रा पाटील व अन्य दो आरोपी आज तक फरार हैं। 2013 में नरेन्द्र दाभोलकर की हत्या में भी सनातन संस्था के हाथ होने की आशंका व्यक्त की जा रही थी। अब कॉ पानसरे की हत्यां में समीर गायकवाड की गिरफ्तारी के बाद नरेन्द्र दाभोलकर के साथ-साथ प्रो. कलबुर्गी की हत्या में सनातन के हाथ होने की आशंका को ज्यादा बल मिल रहा है। डॉ. नरेन्द्र दाभोलकर के अंधश्रद्धा निर्मूलन के कार्यों का सनातन संस्था हमेशा से विरोध करती आयी थी। अंधश्रद्धा विरोधी विधेयक को समर्थन देने के कारण नरेन्द्र दाभोलकर पर सनातन संस्था ने केस भी दर्ज करवाया था। 2011 में एक न्यूज़ चैनल पर चल रही चर्चा में सनातन का प्रतिनिधि अभय वर्तक निरुत्तर हो भाग खड़ा हुआ था। उस चर्चा में नरेन्द्र दाभोलकर भी शामिल थे व संचालन पत्रकार निखिल वागले कर रहे थे। इस घटना के बाद संस्था ने अपने अख़बार 'सनातन प्रभात' में वागले के विरुद्ध मुहिम चलाई और उनका व्यक्तिगत मोबाइल नम्बर अख़बार में छापकर अपने साधकों को उन्हें फोन कर स्पष्टीकरण माँगने को कहा। उसके बाद वागले को भी फोन पर निरन्तर धमकियाँ मिलने लगी। अब समीर गायकवाड की गिरफ्तारी के बाद ये भी खुलासा हुआ है कि निखिल वागले भी इनके निशाने पर थे। संस्था के "धर्मद्रोहियों" की लिस्ट में कॉ. पानसरे थे व संस्था ने उनके विरुद्ध मडगाव न्यायालय में 10 करोड़ रुपये का मानहानि का दावा भी किया था। उसी समय उन्होंने कॉ. पानसरे को "तुम्हें भी दाभोलकर बना दें क्या?" कहते हुए धमकी भी दी थी।

डॉ. दाभोलकर, कॉ. पानसरे व प्रो. कलबुर्गी की हत्याओं में मडगाव बम विस्फोट प्रकरण में फरार चल रहे रूद्रा पाटील व अन्य साधकों के हाथ होने की आशंका व्यक्त की जा रही है। ये हत्याएँ जहाँ-जहाँ हुई वहाँ सनातन संस्था काफी सक्रिय है। संस्था के साधकों द्वारा प्रयुक्त हथियार ज़ब्त किये जा चुके हैं व आशंका है कि उनका इस्तेमाल इन हत्याओं में हुआ था। दाभोलकर की हत्या के गवाहों द्वारा दिये गये वर्णन के अनुसार बनाया गया स्केच मडगाव बम विस्फोट में फरार चल रहे एक व्यक्ति के चेहरे से मिल रहा है। इसके बाद भी संस्था का दावा है कि उसका इन हत्याओं में कोई हाथ नहीं है, पर फिर भी अपने साधक समीर गायकवाड को निर्दोष बताते हुए उसके बचाव के लिए वकीलों की फौज खड़ी कर दी है।

गायकवाड की गिरफ्तारी के बाद एक बार फिर से सनातन संस्था पर प्रतिबन्ध की माँग के लिए सरकार पर दबाव बढ़ रहा है। गोवा के बांदोडा गाँव में संस्था का मुख्य आश्रम है और वहां के स्थानीय ग्रामीणों ने प्रतिबन्ध लगाने की माँग को लेकर आन्दोलन भी शुरू किया है। लेकिन अन्य हिन्दू कट्टरपंथी संगठन व शिवसेना, बीजेपी जैसी पार्टियाँ कभी सामने तो कभी छुपकर सनातन संस्था का बचाव कर रही हैं। केन्द्रीय गृह मंत्रालय ने कहा है कि संस्था पर प्रतिबन्ध लगाने का प्रस्ताव राज्य सरकार की तरफ से आना चाहिये। इसलिए सनातन संस्था पर प्रतिबन्ध लगने की आशंका बहुत कम है। आज विपक्ष में बैठकर सनातन पर त्वरित प्रतिबन्ध की माँग करने वाले कांग्रेस व राष्ट्रवादी कांग्रेस के नेताओं ने उस पर अपने शासनकाल में प्रतिबन्ध नहीं लगाया व अब एक दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप कर रहे हैं।

आज के आधुनिक समय में सनातन संस्था जैसे संगठन समाज में कैसे ज़्यादा से ज़्यादा प्रभावशाली व ताक़तवर होते जा रहे हैं व उसका समाज पर क्या परिणाम होगा - ये मज़दूर वर्ग की दृष्टि से समझना आज अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आज की व्यवस्था ने आम जनता का जीना दूभर कर दिया है। एक तरफ हम लोग विज्ञान की प्रगति की बातें सुनते हैं तो दूसरी तरफ बहुसंख्यक जनता को बदहाली, गरीबी का जीवन बिताना पड़ता है। बेरोज़गारी दिन-ब-दिन विकराल रूप धारण कर रही है। शिक्षा महँगी होती जा रही है व मूलभूत अधिकारों से जनता को वंचित किया जा रहा है। स्वास्थ्य के क्षेत्र में प्राइवेट सेक्टर की घुसपैठ से अच्छी स्वास्थ्य सुविधाओं से समाज का बड़ा हिस्सा वंचित हो गया है। ऐसी समस्याओं की सूची और भी लम्बी बनायी जा सकती है। इन सब परिस्थितियों ने आम जनता के जीवन में एक लगातार कायम करने वाली भयंकर अनिश्चितता कायम की है। आर्थिक जगत में कायम ये अनिश्चितता धीरे-धीरे जीवन के हर कोने-कतरे में प्रवेश कर जाती है और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के अभाव में इस अनिश्चितता को मात देने के लिए लोग किसी पारलौकिक शक्ति का सहारा ढूँढ़ते हैं। आम जनता के जीवन की इन समस्याओं को दूर करने के लिए सामाजिक परिस्थिति का बदलना ही सच्चा उपाय होता है और उसके लिए ठोस लड़ाई खड़ी करनी पड़ती है। सही विकल्प के अभाव में आम जनता धार्मिकता, दैववाद, अन्धश्रद्धा के चंगुल में फँस जाती है। सनातन संस्था जैसे संगठनों का आधार इसी पृष्ठभूमि में होता है। ऐसे संगठनों का उद्देश्य लोगों को सही समस्या व उसके सही समाधान से भटकाकर एक भ्रम के जाल में फँसाना होता है। ऐसी संस्थाएँ समाज परिवर्तन की लड़ाई कमज़ोर करती हैं व शासक वर्ग के विचारों के प्रचार-प्रसार से इस व्यवस्था को मज़बूत बनाती है, खासकर फासीवाद के सामाजिक आधार को बढ़ाती है। समाज में पसरी गरीबी, विषमता, भेदभाव, दलितों-स्त्रियों पर होने वाले भीषण अत्याचार - क्या सनातन संस्था ने कभी इनका विरोध किया है? उल्टा ऐसी घटनाओं में उसने हमेशा ही प्रतिक्रियावादी व मानवद्रोही भूमिका अख्तियार की है व अपने "दैवीय राज्य" व "धार्मिक उत्थान" का बेसुरा राग अलापा है। सनातन संस्थान व ऐसे ही अन्य धार्मिक कट्टरपंथी संगठनों का ये असली चेहरा आम जनता को पहचानना होगा। साथ ही ये भी ध्यान देगा होगा कि ऐसी कट्टरपंथी ताकतों से लड़ने के लिए सिर्फ तर्कशीलता का प्रचार करना ही काफ़ी नहीं है। जिस सामाजिक आधार के कारण आज धार्मिक कट्टरपंथ व रूढ़िवाद को बढ़ावा मिल रहा है, उसे नष्ट करने के लिए व्यापक राजनीतिक-सांस्कृतिक संघर्ष खड़ा करने की ज़रूरत है। इसके बिना सनातन संस्था जैसी संस्थाओं का सामाजिक आधार खत्म नहीं होगा। व्यापक जनता को उसके जीवन की सच्चाइयों के आधार पर लामबन्द करते हुए ऐसा संघर्ष खड़ा करना आज प्रगतिशील ताकतों के सामने मौजूद मुख्य चुनौती है।

**– नारायण खराडे**

# केजरीवाल सरकार का "आम आदमी" चेहरा एक बार फिर बेनकाब

## विधायकों का वेतन 4 गुना तक बढ़ाया!

दिल्ली सरकार द्वारा बनायी गयी एक कमेटी ने उनके "आम आदमी" विधायकों के वेतन को 4 गुने तक बढ़ाने की सिफारिश की है। कुछ दिन पहले इनके विधायकों ने जो कि अपने आप को आम आदमी का प्रतिनिधि कहते हैं माँग की थी कि इनका मासिक वेतन (जो कि भत्ता सहित कुल 88000 से भी ज्यादा है!) इनके परिवार के भरण पोषण व ऑफिस के ख़र्च के लिए पर्याप्त नहीं है, इसलिए इसे कम से कम 4 गुना तक बढ़ाया जाये। 'आम आदमी' की सरकार ने अपने विधायकों की माँग पर जल्द सुनवाई करते हुए एक 3 सदस्यीय कमेटी का गठन कर दिया और अब उस कमेटी की सिफारिश भी आ गयी है। इस सिफारिश के अनुसार विधायकों के कुल वेतन भत्ते को 88,000 रुपए से बढ़ाकर 2.35 लाख तक कर दिया जायेगा! इसमें से उनका वेतन 12,000 रुपए प्रतिमाह से बढ़ कर 50,000 रुपए, क्षेत्र में घूमने का भत्ता 18,000 रुपए से बढ़ा कर 50,000, ऑफिस खर्च 30,000 से बढ़ कर 70,000 , ऑफिस किराया 25,000, संचार भत्ता 8000 से बढ़ा कर 10,000 तक, यातायात भत्ता 6000 से बढ़ा कर 30,000, दैनिक भत्ता 1000 से बढ़ा कर 2000 और ऑफिस फ़र्नीशिंग भत्ता 1 लाख तक करने की बात है।

एक तरफ खज़ाना खाली होने का बहाना बनाकर केजरीवाल सरकार जनता से किये हुए एक एक वादों से मुकरती नज़र आ रही हैं वहीं दूसरी ओर अपने प्रचार के लिए बजट को करीब 21 गुना तक बढ़ा कर 526 करोड़ तक कर दिया है और अपने "ईमानदार" विधायकों का वेतन 4 गुना तक बढ़ाने का बेशर्मी से फैसला करने जा रही है। दरअसल इस बहरूपिये का यही असली रंग है जो अब जनता के सामने आ रहा है। दिल्ली में करीब 80 लाख ठेका मज़दूर-कर्मचारी आबादी है जिनका न्यूनतम वेतन 9000 से 11000 तक कागजों में है जो कि कहीं भी लागू नहीं होता है। सरकार के हिसाब से उनके परिवार के भरण पोषण के लिए यह रकम काफ़ी है लेकिन इनके विधायकों के लिए 88,000 हज़ार रुपए भी कम हैं! वेतन बढ़ोत्तरी पर इनके एक प्रवक्ता ने तो यह तक कह डाला कि चूँकि इनके विधायक ईमानदार हैं इसलिए इनके वेतन में बढ़ोत्तरी की जानी चाहिए। तो इसका क्या मतलब है कि आम मेहनतकश जनता जो 5000-6000 में 12 से 15 घंटे हाड़-मांस गलाती है वो ईमानदार नहीं है ! ये न सिर्फ़ बेशर्मी की हद है बल्कि दिल्ली की आम मेहनतकश जनता का घोर आपमान भी है।

चुनाव से पहले खुद अरविन्द केजरीवाल दूसरी पार्टियों पर ये आरोप लगाते थे कि अपना वेतन बढ़ाने के मुद्दे पर ये सभी एकमत को जाते हैं पर लोकपल पर इनकी सहमति नहीं बनती है। इन्होंने घोषणा की थी कि ये आम आदमी की तरह जीवन बितायेंगे, 25 हज़ार से ज्यादा कोई वेतन नहीं लेगा, कोई बड़ा बंगला नहीं लेंगे, ज़रूरत पड़ने पर छोटा सरकारी घर लेंगे, कोई पुलिस सुरक्षा नहीं लेंगे, सादा जीवन बिताएंगे आदि-आदि। हमेशा की तरह अपनी बात से पलटी खा कर ये "स्वराज" के पुजारी बाकी नेताओं की ही तरह जनता के पैसे पर जम कर आइयाशी कर रहे है।

चुनाव से पहले आम आदमी पार्टी व अरविन्द केजरीवाल ने जनता से बड़े बड़े वादे किये थे। कांग्रेस और भाजपा से त्रस्त जनता ने केजरीवाल पर भरोसा किया और 67 सीटों देकर भारी बहुमत से इनकी सरकार बनवाई। केजरीवाल ने वादा किया था कि ठेका प्रथा ख़त्म करेंगे, श्रम क़ानून सख्ती से लागू कराया जायेगा, झुग्गी के बदले 5 लाख पक्के मकान दिये जायेंगे, 500 स्कूल खोले जायेंगे, 20 नए कॉलेज खोले जायेंगे आदि । लेकिन 6 महीने बीत जाने के बावजूद इन वादों पर

**(पेज 2 पर जारी)**

# महिन्द्रा एंड महिन्द्रा के मालिकाने वाली दक्षिण कोरिया की सांगयोंग कार कम्पनी के मज़दूरों का जुझारू संघर्ष

सांगयोग मोटर फैक्ट्री की छत पर लाल झण्डों के साथ खड़े मज़दूर

हड़ताल तोड़ने के लिए सशस्त्र पुलिस के बर्बर हमले का मज़दूरों ने डटकर मुकाबला किया

दक्षिण कोरिया की कार कम्पनी सांगयोंग मोटर्स के मज़दूर पिछले 7 सालों से छंटनी के ख़िलाफ़ एक शानदार संघर्ष चला रहे हैं। इन सात सालों में उन्होंने सियोल शहर के पास प्योंगतेक कारखाने पर 77 दिनों तक कब्ज़ा भी किया है, राज्यसत्ता का भयंकर दमन भी झेला है, कई बार हार का सामना किया है लेकिन अभी भी वे अपनी मांगों को लेकर डटे हुए हैं। दमन का सामना करते हुए 2009 से अब तक 28 मज़दूर या उनके परिवार वाले आत्महत्या या अवसाद (डिप्रेशन) के कारण जान गँवा चुके हैं। वैसे तो दुनिया में कहीं भी मज़दूर संघर्ष करें तो वह केवल उन्हीं मज़दूरों का संघर्ष नहीं होता बल्कि पूरे मज़दूर वर्ग का संघर्ष होता है लेकिन सांगयोंग मोटर्स के मज़दूरों के साथ खड़े होकर भारत के मज़दूर इस संघर्ष में विशेष रूप से बेहद महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। सांगयोंग मोटर्स का मालिकाना अप्रैल 2014 से भारत के महिन्द्रा एंड महिन्द्रा ग्रुप के पास आ गया है। सितम्बर 2015 महीने में सांगयोंग मोटर्स के मज़दूर दक्षिण कोरिया से विशेष तौर पर भारत आये ताकि भारत के मज़दूरों का भी समर्थन हासिल करके महिन्द्रा एंड महिन्द्रा ग्रुप पर दबाव बना सकें और संघर्ष में जीत हासिल कर सकें। लेकिन संशोधनवादी ट्रेड यूनियनों के जाल में फँसकर फिलहाल उन्हें प्रबन्धन से बहाली का मौखिक आश्वासन लेकर ही वापस लौट जाना पड़ा है। ऐसे आश्वासन इन मज़दूरों को पहले भी दिये जा चुके हैं लेकिन उनका कोई नतीजा नहीं निकला है। इसके बावजूद दक्षिण कोरिया के मज़दूर अपने संघर्ष को आखिरी साँस तक जारी रखेंगे और ऐसे में **भारत के जुझारू मज़दूर संगठनों के लिए यह बेहद ज़रूरी है कि इस संघर्ष में वे दक्षिण कोरिया के मज़दूरों का साथ दें।**

सांगयोंग मोटर्स का मालिकाना 2009 से पहले चीन की कम्पनी शंघाई ऑटोमोटिव कॉर्पोरेशन (एस.ए.आई.सी.) के पास था लेकिन सभी मालिकों की तरह चीन की कम्पनी ने भी अपने मालिकाने के दौरान मज़दूरों के अधिकारों को कोई महत्व नहीं दिया और अन्त में सांगयोग मोटर्स के जरिये अच्छा मुनाफ़ा कमाकर और फिर मुनाफ़े की दर गिरने पर कम्पनी को दिवालिया दिखाकर चलती बनी। हर देश में बड़ी बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ विकास का ढिंढोरा पीटते हुए ही आती हैं लेकिन उनका असली मकसद मज़दूरों को निचोड़कर मुनाफ़ा कमाना ही होता है। दिवालिया होने जैसी स्थिति सांगयोंग मोटर्स की नहीं थी लेकिन इस बहाने के ज़रिये सांगयोंग मोटर्स ने अप्रैल 2009 में कम्पनी के 37 फीसदी (7179 में से 2646) मज़दूरों को छँटनी का नोटिस थमा दिया। बाद में कम्पनी ने कहा कि वह केवल 978 मज़दूरों को ही कम्पनी से निकालेगी और कम्पनी की स्थिति सुधरने पर उन्हें वापस ले लेगी। मज़दूरों ने प्रबन्धन से इस कदम को वापस लेने के लिए वार्ताएँ चलाई लेकिन प्रबन्धन जब नहीं झुका तो अन्तत: सांगयोंग मोटर्स के लगभग 1000 मज़दूरों ने 22 मई को कारखाने पर कब्ज़ा कर लिया।

मज़दूरों के बीच ज़बर्दस्त आक्रोश था क्योंकि पिछले 5 महीनों से मज़दूरों को पग़ार भी नहीं दी गयी थी। इसके बाद 77 दिनों तक कम्पनी के गुण्डों और पुलिस के साथ मज़दूरों का जुझारू संघर्ष चलता रहा। जब मालिकों ने गुण्डों और पुलिस का सहारा लिया तो मज़दूरों ने भी खुद को हथियारबन्द कर लिया। पुलिस ने इलेक्ट्रिक गन (टेज़र) का इस्तेमाल किया जिससे शरीर पर भयंकर घाव हो जाते हैं। मजदूरों ने भी जवाब में पेट्रोल बमों, स्टील की छड़ों व अपने औज़ारों से उनका मुकाबला किया और जैसे-जैसे दिन बीतते गये यह संघर्ष और भी तीखा होता गया। 20 जुलाई को सरकार ने अपनी पूरी ताक़त से मज़दूरों पर हमला किया और पानी और गैस की सप्लाई काट दी। अगले दिन बिजली भी काट दी गयी और हेलिकॉप्टरों के ज़रिये आँसू गैस का बड़े पैमाने पर छिड़काव किया गया। आँसू गैस के साथ ही ऐसे रसायन का भी छिड़काव किया गया जिससे चमड़ी जल जाती है। 3000 की संख्या में पुलिस बल और कम्पनी के गुण्डे कई दिनों तक प्लांट को मजदूरों के कब्ज़े से छुड़ाने की कोशिश करते रहे लेकिन मज़दूर गुलेलों द्वारा नट-बोल्ट फेंककर पुलिस की बंदूकों का सामना करते रहे। आसपास के दूसरे कारखानों के मज़दूरों ने भी प्लांट के भीतर मज़दूरों को हर सम्भव मदद पहुँचाई और बाहर से वे पुलिस की नाक में दम करते रहे। पुलिस ने मज़दूरों के खाने और दवा-इलाज की सप्लाई पर भी बाहर से रोक लगा दी लेकिन इसके बाद भी मज़दूरों ने हार नहीं मानी और वे डटे रहे। अन्तत: 4 और 5 अगस्त को उनके संघर्ष को बेरहमी से कुचल दिया गया और मज़दूरों की तात्कालिक हार हुई। 978 में से 48 फीसदी (478) को एक साल की अवैतनिक छुट्टी दे दी गयी और 52 फीसदी (510) मजदूरों को ज़बर्दस्ती रिटायरमेंट दे दिया गया। यूनियन से कहा गया कि कम्पनी की स्थिति सामान्य होने पर इन मज़दूरों को तरजीह दी जायेगी। केवल इतना ही नहीं इसके बाद कम्पनी ने यूनियन के ख़िलाफ़ प्लांट को हुए नुकसान की भरपाई करने के लिए मुकदमा भी ठोक दिया और लगभग 20 करोड़ रुपये का जुर्माना मज़दूरों के सिर पर लाद दिया।

तब से लेकर अब तक सांगयोंग मोटर्स के मज़दूर लगातार अपनी लड़ाई लड़ रहे हैं ताकि यह जुर्माना हटाया जा सके, उनकी फिर से बहाली हो और इस प्रकरण में जिन मज़दूरों की जानें गयी हैं उनके परिवारों के लिए गुज़र-बसर का ठोस इन्तज़ाम किया जा सके। इस बीच वे 4 बार लम्बी भूख हड़तालें चला चुके हैं, 70 मीटर ऊंचे टॉवर पर ठण्ड में तीन महीनों से अधिक तक रहकर अपना प्रतिरोध जता चुके हैं और अब दक्षिण कोरिया से मज़दूरों का प्रतिनिधि मण्डल भारत भी आया ताकि भारत के मज़दूरों के साथ मिलकर महिन्द्रा एंड महिन्द्रा ग्रुप पर दबाव बनाकर अपनी माँगें पूरी करा सकें।

महिन्द्रा एंड महिन्द्रा ग्रुप के चेयरमैन आनन्द महिन्द्रा ने जनवरी 2015 में दक्षिण कोरिया में सांगयोंग मोटर्स की नयी कार टिवोली के उद्घाटन के मौक़े पर मज़दूरों को विश्वास दिलाया था कि अगर यह गाड़ी बाज़ार में अच्छा मुनाफा कमाती है तो वे निश्चित ही निकाले गये मज़दूरों को वापस काम पर ले लेंगे। जनवरी से सितम्बर के बीच इस गाड़ी की अच्छी-खासी बिक्री हुई है लेकिन मज़दूरों से किया गया वायदा पूरी तरह से भुला दिया गया है। यह कोई ताज्जुब की बात नहीं है क्योंकि मालिकों द्वारा इस तरह के वायदे भुलाने के लिए ही किये जाते हैं।

### भारत की संशोधनवादी ट्रेड यूनियनों की बेशर्मी

सांगयोंग के मज़दूरों का प्रतिनिधि मण्डल जब मुम्बई आया तो उन्हें यहाँ की ग़द्दार ट्रेड यूनियनों से रूबरू होना पड़ा। खुद को प्रगतिशील और जुझारू कहने वाली बड़ी ट्रेड यूनियनों के नेताओं से सांगयोंग के मज़दूरों ने मुलाकात की ताकि वे इस संघर्ष में भारत के भीतर उनका सही मार्गदर्शन कर सकें और महिन्द्रा एंड महिन्द्रा ग्रुप पर दबाव बना सकें लेकिन यहाँ पर वे धोखा खा गये। भारत के मज़दूरों की सबसे बड़ी दुश्मन संशोधनवादी ट्रेड यूनियनों ने अब दक्षिण कोरिया के मज़दूरों की लड़ाई को भी गड्ढे में डालने की ठान ली है। सांगयोंग के मज़दूरों के लिए ज़ोरदार आवाज़ उठाने के बजाय ये यूनियनें उन्हें नसीहतें देने में लगी रहीं और वार्ताओं के ज़रिये मामले को सुलटाने का आश्वासन देती रहीं। बेहद सीमित संसाधनों के साथ 'करो या मरो' की लड़ाई ठानकर आये सांगयोंग मज़दूरों को इन यूनियनों द्वारा यह विश्वास दिलाया जाता रहा कि आनन्द महिन्द्रा बेहद उदार और मज़दूरों के संरक्षक हैं और अगर वे सब्र रखें तो अवश्य ही आनन्द महिन्द्रा जी उनकी फरियाद सुनेंगे। तीन-तिकड़म करके मालिकों के साथ बातचीत कराना और झूठे आश्वासन दिलाना इन ट्रेड-यूनियनों का मुख्य काम रह गया है। यहाँ भी प्रबन्धन से मज़दूरों के प्रतिनिधिमण्डल की बातचीत तो हुई लेकिन उसका परिणाम केवल इतना निकला कि प्रबन्धन ने मामले पर सोचने और दोबारा बहाली का महज़ मौखिक आश्वासन ही दिया। आश्वासन तो जनवरी में आनन्द महिन्द्रा ने भी दिया था, वह भी ख़ुद दक्षिण कोरिया जाकर, तब फिर उस आश्वासन का क्या हुआ? इन ट्रेड यूनियनों ने अपना कर्तव्य अपने पुराने तरीके से निभाया है यानी कि हर मसले का मेज़ पर बैठकर निबटारा करने की कवायद करते रहना। फलत: सांगयोंग के मज़दूर एक तरह से निराश ही लौटे हैं। संशोधनवादी ट्रेड यूनियनों की इस घृणित ग़द्दारी के बाद भले ही सांगयोंग के मज़दूरों को अपने देश वापस लौट जाना पड़ा हो लेकिन यह संघर्ष जारी रहेगा। जुझारू मज़दूर संगठनों को ऐसे में दृढ़ता से सांगयोंग के मज़दूरों के साथ खड़ा होना होगा और नये सिरे से भारत में इसके लिए आवाज़ उठानी होगी।

हमें इस अमर नारे को एक बार फिर याद करना होगा:

**'दुनिया के मज़दूरो, एक हो! तुम्हारे पास खोने के लिए सिर्फ़ अपनी बेड़ियाँ हैं, जीतने के लिए पूरी दुनिया है!'**

**– विराट**

# ये मौतें बीमारी की वजह से हैं या कारण कुछ और है?

अभी कुछ दिन पहले ही की खबर है कि देश की राजधानी दिल्ली में डेंगू से पीड़ित एक छह वर्षीय बच्चे की समय पर इलाज न मिलने की वजह से मृत्यु हो गई। बच्चे के माता पिता उसको उठाए उठाए इस अस्पताल से उस अस्पताल तक भटकते रहे लेकिन न तो सरकारी अस्पताल में और न ही किसी प्राइवेट अस्पताल में बच्चे को दाखिल किया गया। सरकारी अस्पतालों ने वही रटा रटाया जवाब दिया कि उनके पास बिस्तर नहीं हैं। और चूँकि बच्चे के माता पिता निम्न मध्य वर्ग से सम्बन्ध रखते थे तो बड़े कॉर्पोरेट अस्पतालों की फीस वे दे नहीं सकते थे। अंत में एक प्राइवेट अस्पताल में जब उसको दाखिल किया गया तो तब तक बहुत देर हो चुकी थी और अंततः यह बच्चा इस मुनाफाखोर व्यवस्था की भेंट चढ़ गया। बाद में सदमे से इस बच्चे के माता पिता ने भी आत्महत्या कर ली। लेकिन यह कोई नया मामला नहीं है और न ही पहली बार इस तरह से किसी की मौत हुई है। पिछले दो दशकों से डेंगू हर साल देश को और खासतौर पर दिल्ली को अपनी चपेट में ले लेता है। सिर्फ डेंगू ही नहीं बल्कि मलेरिया, जापानी बुखार, इन्फ्लुएंजा, हैजा जैसी बीमारियाँ हर साल लाखों लोगों को लील जाती हैं। आज जबकि चिकित्सा विज्ञान ने इतनी तरक्की कर ली है कि हम अधिकतर बीमारियों का इलाज कर सकते हैं और बाकी को फैलने से रोक सकते हैं। लेकिन इतनी खोजों और विकास के बावजूद देश की जनता पर बीमारियों का घातक आक्रमण होता है। एक अध्ययन के अनुसार भारत में हर साल 60 लाख डेंगू के मामले होते हैं जो रिपोर्ट ही नहीं होते। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार भारत में मलेरिया के हर साल 1000000 केस रिपोर्ट होते हैं जिनमें से 15000 की मौत हो जाती है जबकि एक अन्य अध्ययन के अनुसार भारत में हर साल मलेरिया से 200000 मौतें होती हैं जो रिपोर्ट नहीं हो पाती। भारत सरकार के आंकड़ों के अनुसार हर साल जापानी बुखार से 1714 और 6594 के बीच केस सामने आते हैं जिनमें से 367 और 1665 के बीच मर जाते हैं। इसी तरह अगर टाइफाइड की बात करें तो इस बीमारी से भी भारत में हर साल 10 लाख से ज्यादा लोग पीड़ित होते हैं। मोटे तौर पर देखा जाए तो प्रति 1 लाख की जनसंख्या में से 88 लोग इस बीमारी का शिकार हर साल हो जाते हैं। जाहिर है कि ये आंकड़े देश के स्वास्थ्य की भयावह तस्वीर पेश करते हैं। लेकिन इससे भी भयावह वह तस्वीर है जो यह मानवता विरोधी व्यवस्था इन बीमारियों की रोकथाम और इलाज के दौरान प्रस्तुत करती है।

आज हमारे पास अधिकतर बीमारियों से लड़ने के लिए दवाएं मौजूद है। न सिर्फ मौजूद हैं बल्कि इनका बहुत बड़ा जखीरा हमारे पास है। ऐसे में होना तो यह चाहिए कि हर आदमी को हर तरह की दवा समय पर और मुफ्त में उपलब्ध हो, लेकिन अधिकतम जनसंख्या को बहुत जरूरी दवाएं तक नहीं मिल पाती हैं, या तो ये उपलब्ध नहीं हैं और जहाँ उपलब्ध हैं वहां अधिकतर लोगों की पहुँच नहीं है। भारत में लगभग दो-तिहाई आबादी को समय पर दवाई नहीं मिलती। जाहिर है एक बड़ी आबादी पेटभर कर भोजन नहीं कर पाती है तो दवा कहाँ से खरीद पायेगी। कुछ साल पहले हरियाणा और राजस्थान की सरकारों ने सभी सरकारी अस्पतालों और मेडिकल कालेजों में सभी को मुफ्त दवाएं उपलब्ध करवाने की परियोजना शुरू की थी। पूंजीवाद गंदगी को ढंकने के लिए अक्सर राज्यसत्ता कल्याणकारी स्कीमें चलाती है। लेकिन विडंबना यह है कि व्यापक मेहनतकश आबादी को इन कल्याणकारी योजनाओं से भी कोई लाभ नहीं हो पाता है। राजस्थान में दो साल से इस परियोजना को ठंडे बस्ते में डाल दिया गया है और मरीजों को अभी भी दवा के लिए प्राइवेट मेडिकल स्टोरों पर अपनी जेब कटवानी पड़ती है। देखा तो यह भी गया है कि मरीज को सरकार द्वारा भेजी गई दवा भी प्राइवेट स्टोर से खरीदनी पड़ी है। ऐसा नहीं है कि दवाओं की कमी है या सरकार के पास पैसा नहीं है। इंडियन ब्रांड इक्विटी फाउंडेशन नामक एक गैर सरकारी संगठन द्वारा किए गए एक सर्वे के अनुसार 2020 तक भारतीय दवा मार्किट का कारोबार 85 अरब अमेरिकी डॉलर हो जाने की सम्भावना है। बहुत तेजी से बढ़ता हुआ दवा उद्योग हमारे देश में ही नहीं पूरी दुनिया में हथियारों के बाद सबसे ज्यादा मुनाफे का कारोबार बनता जा रहा है। लेकिन फिर यह एक मुनाफाखोर व्यवस्था ही है जिसमें मानवता के लिए कोई स्थान नहीं है। एक अनुमान के अनुसार अगर सरकार बजट का 2 प्रतिशत भी दवाओं पर खर्च करे तो पूरे देश में मुफ्त दवाएं उपलब्ध करवाई जा सकती हैं। पिछले बजट में केंद्र सरकार ने बड़े कॉर्पोरेट हाउसेस को लगभग छह लाख करोड़ के अनुदान और सब्सिडी दिए हैं, वहीँ जन कल्याणकारी स्कीमों (जिसमे स्वास्थ्य भी है) को दिए जाने वाले बजट से 18000 करोड़ रूपये की कटौती की है। जाहिर है सरकार के पास पैसे की कमी नहीं है, बल्कि असल बात ये है कि सरकार को जनता से कुछ लेना देना नहीं है।

अब अगर स्वास्थ्य सेवाओं की बात की जाए तो विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार हेल्थ सिस्टम की रैंकिंग में भारत का स्थान पूरी दुनिया में 112वाँ है। गृहयुद्ध की मार झेल रहा लीबिया भी इस क्षेत्र में भारत से आगे है। भारत में हर तीस हजार की आबादी पर एक प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र, हर एक लाख की आबादी पर 30 बेड वाले एक सामुदायिक स्वास्थ्य केंद्र और हर सब डिविजन पर एक 100 बेड वाले सामान्य अस्पताल का प्रावधान है। आज की मौजूदा हालत में ये प्रावधान ऊंट के मुंह में जीरा ही हैं लेकिन असल में होता क्या है कि जनता तक ये प्रावधान भी नहीं पहुँच पाते हैं। मतलब नौबत ये है कि ऊंट के मुंह में जीरा तक नहीं है। भारत में आज के समय में 381 सरकारी मेडिकल कॉलेज हैं जिनमें एक एमबीबीएस डॉक्टर को तैयार करने में 30 लाख से ज्यादा का खर्चा आता है। जाहिर है यह सब मेडिकल कॉलेज बनाने में और डॉक्टरों की पढ़ाई का सारा पैसा देश की जनता द्वारा दिए गए टैक्स से ही आता है, लेकिन यहाँ से डिग्री लेने के बाद अधिकतर डॉक्टर बड़े कॉर्पोरेट अस्पतालों में या फिर निजी व्यवसाय में उसी जनता की जेब काटने में जुट जाते हैं। जो थोड़े से डॉक्टर सरकारी नौकरी करना भी चाहते हैं तो उनके लिए जन स्वास्थ्य सेवाओं या सरकारी अस्पतालों में वैकेंसी नहीं निकलती। सरकारी स्वास्थ्य सेवाओं में डॉक्टरों की भारी कमी का आलम ये है कि भारत में दस हजार की आबादी पर सरकारी और प्राइवेट मिलाकर कुल डॉक्टर ही 7 हैं और अगर अस्पतालों में बिस्तरों की बात करें तो दस हजार की आबादी पर सिर्फ 9 बिस्तर मौजूद हैं। दूसरे देशों से तुलना की जाये तो क्यूबा में प्रति दस हजार आबादी 67 डॉक्टर हैं, रूस में 43, स्विट्ज़रलैंड में 40 और अमेरिका में 24 डॉक्टर हर दस हजार की आबादी पर हैं। जबकि विश्व स्वास्थ्य संगठन के मानकों के अनुसार दस हजार की आबादी पर कम से कम 25 डॉक्टर और 50 बिस्तर होने ही चाहिएं। बीमारियों के इतनी अधिक बोझ के चलते हालाँकि यह मानक भी पर्याप्त नहीं हैं लेकिन हमारे देश में यह न्यूनतम सुविधा भी लोगों को नहीं मिल पा रही है। ऐसे में अगर कोई महामारी फैलती है तो सरकार पैसे और इंफ्रास्ट्रक्चर की कमी कह कर पल्ला झाड़ने को तैयार रहती है। ज्यादा से ज्यादा सरकार ये करती है कि किसी भी बीमारी की रोकथाम के लिए ठोस तरीके से कारगर कदम उठाने की बजाय लोगों में बीमारी का हौव्वा खड़ा कर दिया जाता है, जिससे उसपर कण्ट्रोल तो होता नहीं लेकिन प्राइवेट डॉक्टरों के मुनाफे में जरूर बढ़ोतरी हो जाती है। या फिर यह किया जाता है कि जैसे ही महामारी फैलती है और मौतें होने लगती हैं तो फटाफट सम्बंधित रजिस्टरों को भर लिया जाता है और रिकॉर्ड बना लिया जाता है कि सरकार की तरफ से पूरी कोशिशें की गई हैं। स्वास्थ्य कर्मियों और डॉक्टरों की फर्जी विजिट भी सम्बंधित क्षेत्र में दिखा दी जाती हैं। अब डेंगू को ही ले लीजिए। यह एडिस नामक मच्छर से फैलने वाला रोग है। पहले तो सरकारें और नगर निगम कालोनियों और बस्तियों में मच्छर मारने के लिए फोगिंग या कीटनाशकों का छिडकाव कभी कभार ही सही कर देती थी, लेकिन अब तो आलम ये है कि कालोनी वालों यह पता ही नहीं होता कि फोगिंग नाम की भी कोई चीज होती है। साफ़ बात है अगर मच्छरों को मार दिया गया तो फिर डेंगू कैसे फैलेगा, और अगर डेंगू नहीं फैला तो प्राइवेट हेल्थ सेक्टर और दवा कम्पनियों को मुनाफा कैसे मिलेगा? और यह बात सिर्फ डेंगू पर नहीं सभी बीमारियों पर लागू होती है। दूषित पानी से फैलने वाली बीमारी टाइफाइड या हेपेटाइटिस ए का कारोबार भी इसी तरह से होता है। सरकार का काम होता है कि वह सभी नागरिकों को पीने का साफ पानी मुहैया कराए लेकिन कालोनियों और मजदूरों की बस्तियों में अव्वल तो पानी पानी पहुँचता ही नहीं और जो पहुँचता है वह टूटी फूटी पाइपों के जरिये गंदी दूषित जगहों से हो कर आता है जिसको पीने से टाइफाइड ही क्या अनेकों बीमारियाँ हो जाती हैं। और इन का सीधा फायदा दवा कम्पनियों और प्राइवेट अस्पतालों को पहुँचता है।

जैसा कि हम जिक्र कर चुके हैं कि पूंजीवाद कुछ हद तक जन कल्याणकारी योजनाएं चलाता ही है। ये इसकी मजबूरी होती है लेकिन आज पूंजीवाद इस हालत में नहीं है कि इन योजनाओं को जारी रख सके। कल्याणकारी राज्य का कींसियाई फार्मूला लगातार जारी पूंजीवादी संकट के चलते फेल हो चुका है। ऐसे में पूरी दुनिया में सरकारें नागरिकों को मूलभूत सुविधाएँ मुहैया कराने से हाथ खींच रही हैं। लेकिन भारत जैसे देश में यह काम ज्यादा बेशर्मी के साथ और ज्यादा तेजी के साथ किया जा रहा है। स्वास्थ्य और शिक्षा ये दोनों ही बेहद मुनाफा देने वाले कारोबार हैं। और सरकार इन दोनों से ही पल्ला झाड कर जनता को प्राइवेट खून चूसू जोंकों के हवाले करने पर तुली हुई है। जाहिर सी बात है इसका सीधा फायदा बड़े कॉर्पोरेट और पूंजीपतियों को ही होने वाला है। अगर स्वास्थ्य सेवाओं की बात करें तो हर क्षेत्र की तरह पब्लिक प्राइवेट पार्टनरशिप नाम की एक घिनौनी स्कीम इस क्षेत्र में भी चलाने की कोशिश की जा रही है, जिसमें इंफ्रास्ट्रक्चर और पैसा सरकार यानि देश की जनता का और मुनाफा पूंजीपतियों का होगा। दलील दी गई है कि गरीब आदमी को इससे उच्च श्रेणी की स्वास्थ्य सुविधाएँ मिलेंगी, जबकि सच्चाई इससे कोसों दूर है। गरीब आदमी को सिर्फ ठोकरें मिलती हैं जैसा कि हम डेंगू से पीड़ित इस बच्चे के केस में देख चुके हैं। अब अगर प्राइवेट अस्पतालों की बात करें तो प्राइवेट अस्पताल असल में इलाज नहीं करते बल्कि इलाज को माल की तरह बेचते हैं, इस तरह से इनके लिए मरीज मरीज नहीं होता, सिर्फ कस्टमर होता है, और जो "माल" को खरीदने की हैसियत रखता है वो खरीद लेता है और जो यह हैसियत नहीं रखता वह मर जाता है। गौरमतलब है कि 2007 में दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्देश के अनुसार दिल्ली सरकार ने प्राइवेट अस्पतालों को नोटिफिकेशन जारी किया हुआ है कि प्राइवेट अस्पतालों में 10 प्रतिशत बिस्तर गरीब मरीजों के लिए फ्री होने चाहिए। लेकिन इस बात से इनके मालिकों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। क्योंकि इस आदेश के उलंघन लाखों रूपये मरीज से वसूलने वाले ये अस्पताल थोडा बहुत आर्थिक दंड कभी भी भर सकते हैं। ये अस्पताल अपने बिस्तरों को खाली रख लेते हैं लेकिन गरीबों को एडमिट नहीं करते, क्योंकि गरीब इनकी फीस नहीं दे सकते। और अगर मरीज कहीं से पैसे का जुगाड़ करके इनके चंगुल में फंस भी जाये तो उसकी जेब को तराशने में ये कोई कसर नहीं छोड़ते। तमाम तरह के गैरजरूरी टेस्ट और गैरजरूरी दवाएं जो बहुत महंगी होती हैं, मरीज पर थोप दी जाती हैं। बिस्तर का खर्चा और डॉक्टर की फीस तो इनसे अलग होती ही है। दो साल पहले दिल्ली हाई कोर्ट में सीमा चौहान नाम की एक महिला ने शिकायत दर्ज कराई थी कि अपोलो अस्पताल ने पहले तो लीवर की बीमारी से पीड़ित उसके पति की इलाज के दौरान मृत्यु के बाद 8 लाख रूपये का बिल थमा दिया और पैसे जमा न होने तक उसके शव को नहीं सौंपा। मानवीय संवेदनाओं की कितनी दुर्गति मानवीय समझे जाने वाले इस पेशे में हो रही है। ये तो एक उदाहरण मात्र है। ऐसे वाकये रोज होते हैं लेकिन किसी सरकार या प्रशासन के कानों पर जूं तक नहीं रेंगती। यह सब कुछ सरकार की नाक के नीचे सरकार की जानकारी या कहिये सरकार की मिलीभगत से ही होता है। साफ है कि सरकार पूंजीपतियों की मैनेजिंग कमेटी होने का अपना फ़र्ज़ बहुत बढ़िया तरीके से निभा रही है।

कुल मिलकर बात ये है कि पूंजीवादी व्यवस्था अपने आप में एक बीमारी है जो पूरे समाज को खाए जा रही है। इस व्यवस्था के चलते कोई भी जन कल्याणकारी काम होने की उम्मीद करना बेमानी है। इस व्यवस्था में किसी का कल्याण हो सकता है तो वो है सिर्फ और सिर्फ पूंजीपति और उनके दलाल। यूँ तो किसी भी क्षेत्र में समाजवादी व्यवस्था पूंजीवाद से कई गुणा बेहतर होगी लेकिन अगर हम सिर्फ जन स्वास्थ्य की ही बात करें तो सोवियत संघ और चीन में समाजवादी दौर में हुए महान प्रयोगों के दौरान जन स्वास्थ्य और चिकित्सा के क्षेत्र में जो उपलब्धियां हासिल की गई थी वे अद्वितीय थी। यहाँ तक कि क्यूबा में भी स्वास्थ्य सुविधाएँ आज भी दुनिया में सर्वश्रेष्ठ में से एक मानी जाती हैं। आज जरूरत इसी बात की है कि मुनाफे पर टिकी हुई इस मानवद्रोही संवेदनाहीन व्यवस्था को उखाड़ फेंका जाए और मेहनतकश जनता का लोक स्वराज स्थापित किया जाए। केवल तभी इस बीमारी से मरती हुई मानवता को बचाया जा सकता है।

**– नवमीत**

(लेखक पेशे से डॉक्टर हैं)

# उत्तर-पश्चिमी दिल्ली की मज़दूर बस्तियों में साम्प्रदायिक तनाव भड़काने की संघ परिवार के संगठनों की कोशिशें

(पेज 1 से आगे)

मध्यवर्ग के घरों के युवाओं की संख्या प्रमुख होती है, जबकि साम्प्रदायिक तनावों के दौरान हुड़दंग करने में लम्पट तत्वों की भूमिका प्रमुख हो जाती है। ऐसे तत्वों की गिरोहबंदी में इन दिनों बजरंग दल की भूमिका बढ़ती जा रही है। इस पूरे इलाके की मध्यवर्गीय कालोनियों में भी 'गो रक्षा महा अभियान' के बैनर तले हस्ताक्षर अभियान के बहाने व्यापक जन सम्पर्क अभियान चलाया जा रहा है।

### पृष्ठभूमि: निकट अतीत की घटनाएँ

केन्द्र में नरेन्द्र मोदी सरकार के बनने के बाद से दिल्ली के विभिन्न इलाकों में साम्प्रदायिक तनाव और टकराव की घटनाएँ सिलसिलेवार घटती रही हैं। अधिकांश मामलों में ये घटनाएँ संघ परिवार के अनुषंगी संगठनों की योजना और उकसावेबाजी का नतीजा रही हैं जिनमें भाजपा के स्थानीय नेताओं और जनप्रतिनिधियों का सक्रिय सहयोग रहा है। छिटपुट घटनाओं को छोड़ भी दें तो कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं के सिलसिले को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता।

विगत 1 अगस्त, 2014 को उत्तर-पूर्वी दिल्ली के नन्दनगरी में एक स्थानीय विवाद को बाहरी तत्वों द्वारा साम्प्रदायिक टकराव का रूप दिया जाना (जिसमें 12 लोग घायल हुए), 2 अक्टूबर से 6 अक्टूबर के बीच उत्तर-पश्चिमी दिल्ली के बवाना जे.जे. कॉलोनी में आर.एस.एस. से जुड़े संगठन 'हिन्दू क्रांतिकारी सेना' द्वारा मवेशी चोरी और गो हत्या की झूठी अफ़वाह फैलाकर, बलपूर्वक मुस्लिम घरों की तलाशी लेकर, एक कबाड़-व्यापारी को पीटकर तथा मोटर साइकिल रैली निकालकर साम्प्रदायिक तनाव भड़काना, 11 अक्टूबर को दक्षिणी दिल्ली में जोरबाग कर्बला पर भीड़ द्वारा पत्थरबाजी करके दरगाह की सम्पत्ति को गम्भीर नुकसान पहुँचाना और दर्जनों बच्चों को घायल कर देना, 23-26 अक्टूबर को त्रिलोकपुरी में एक स्थानीय विवाद को साम्प्रदायिक रंग दिया जाना और स्थानीय भाजपा विधायक सुनील वैद्य द्वारा साम्प्रदायिक भावनाएँ भड़काने के बाद पत्थरबाजी और हिंसक टकराव, 25 अक्टूबर-4 नवम्बर के बीच एक बार फिर बवाना जे.जे. कॉलोनी में संघ परिवार के लोगों द्वारा मोहर्रम के ताजिया जुलूस को रोकने के लिए लोगों को उकसाना, हरियाणा-दिल्ली के आसपास स्थित गाँवों से 'महापंचायत' के नाम पर लोगों को और ए.बी.वी.पी. कार्यकर्ताओं को जुटाना (बिना पुलिस-इजाज़त के हुए इस महापंचायत में बवाना के स्थानीय भाजपा विधायक गुगन सिंह रंगा और कई अन्य ने भड़काऊ भाषण दिये, लेकिन किसी पर कोई कार्रवाई नहीं हुई) और गम्भीर साम्प्रदायिक तनाव का माहौल बनाना, 5 नवम्बर को ओखला के मदनपुर खादर में एक मस्जिद में मुर्दा सूअर फेंककर साम्प्रदायिक तनाव उकसाने की कोशिश करना, 9 नवम्बर को बाबरपुर में एक रेस्टोरेण्ट के सामने अज्ञात व्यक्ति द्वारा रखी गयी गाय की लाश पाये जाने के बाद साम्प्रदायिक लामबन्दी की कोशिशें और 11 नवम्बर को बाबरपुर से सटे घोण्डा में 'युवा हिन्दूज़ संघ' द्वारा पंचायत बुलाना, दिसम्बर 2014 में चर्चों में पत्थरबाज़ी और आगज़नी, त्रिलोकपुरी में साध्वी निरंजन ज्योति द्वारा ''रामज़ादा-हरामज़ादा'' वाला कुख्यात भाषण देकर तनाव पैदा करने की कोशिश — इन सभी घटनाओं का सिलसिला अपने आप में यह स्पष्ट कर देने के लिए काफी है कि हिन्दुत्ववादी कट्टरपंथी दिल्ली के विभिन्न इलाकों में तरह-तरह से साम्प्रदायिक तनाव और दंगे भड़काने की सुनियोजित कोशिशों में 2014 से ही लगातार लगे हुए हैं।

उपरोक्त लगभग सभी घटनाओं में कुछ बातें आम हैं। पहली बात, सभी जगह स्थानीय आम लोगों ने ठोस एकजुटता दिखाते हुए साम्प्रदायिक ताक़तों की साज़िशों को नाकाम किया और स्थिति को विस्फोटक होने से बचाया। दूसरे, प्राय: सभी मामलों में पुलिस ने मूक दर्शक जैसी भूमिका निभायी, जाँच करके दोषियों पर कोई कार्रवाई नहीं की और यदि बीच-बचाव करके स्थिति नियंत्रण में लाने की कोशिश भी की तो स्थानीय जन समुदाय और उनकी अमन कमेटी जैसी संस्थाओं के दबाव डालने पर की। तीसरी बात, उकसावेबाज़ी की कुछ घटनाएँ ''अज्ञात लोगों'' ने की, जबकि अधिकांश में संघ परिवार से जुड़े संगठनों और स्थानीय भाजपा नेताओं की अहम भूमिका थी।

2014 के अंत से हिन्दुत्ववादी शक्तियों की सरगर्मियाँ उत्तर-पश्चिमी दिल्ली की मज़दूर बस्तियों में बढ़ गयीं और 2015 की साम्प्रदायिक तनाव की अधिकांश घटनाएँ इसी इलाके में घटी हैं। बवाना में तो पहले ही शुरुआत हो चुकी थी, 10 दिसम्बर 2014 को साम्प्रदायिक ताक़तों ने होलम्बी खुर्द को अपनी नयी प्रयोगशाला बनाने की कोशिश की।

### होलम्बी कलां में साम्प्रदायिक आग भड़काने की सरगर्मियाँ और ख़तरनाक तैयारियाँ

होलम्बी में कई चरणों वाली मेट्रो विहार कॉलोनी को बसाने का काम 2000-2001 में शुरू हुआ। 2006 में दिल्ली सरकार ने जखीरा से झुग्गियों को हटाकर मेट्रो विहार, फ़ेज-2, ब्लॉक-बी में वहाँ से उजड़ी आबादी का पुनर्वास कराया। 2007 में इन्द्र लोक से उजाड़े गये कुछ परिवारों का भी यहाँ पुनर्वास कराया गया। होलम्बी कलां कुल दो फ़ेज़ और 6 ब्लॉकों में बँटा है, जहाँ कुल 900 मुस्लिम परिवार हैं और आबादी का 10 प्रतिशत हिस्सा मुस्लिमों का है।

मेट्रो विहार बसाये जाने के समय से ही मन्दिर और मस्जिद तथा कब्रिस्तान और श्मशान के लिए जनता की ओर से प्रशासन से माँग की जाती रही। लोग डी.डी.ए. की खाली ज़मीनों पर लगातार, एक के बाद एक मन्दिर बनाते रहे। यहाँ के मुस्लिम समुदाय ने भी प्रशासन से मस्जिद के लिए जगह की माँग कई बार की। डी.डी.ए. के स्थानीय जूनियर इंजीनियर ने उनसे मौखिक तौर पर कहा कि मस्जिद के लिए स्थाई तौर पर जगह अलॉट होने तक वे कहीं भी उपयुक्त खाली जगह पर अस्थाई मस्जिद बना लें और 2006-7 में उस जगह पर मस्जिद का अस्थाई ढाँचा बिलाल वेलफेयर सोसाइटी की ओर से खड़ा किया गया। 2010 में स्लम अधिकारियों द्वारा मुआयना करने और मस्जिद के लिए जगह के अलॉटमेण्ट हेतु कहने के बाद 2010 और 2012 में मुस्लिम परिवारों ने दो बार अलॉटमेण्ट के लिए आवेदन किया, लेकिन इसपर कोई कार्रवाई नहीं हुई और अस्थाई मस्जिद चलती रही। बिलाल मस्जिद फ़ेज-2 की जिस जगह पर स्थित है, वहाँ पहले सरकारी प्राइमरी स्कूल बनना था, लेकिन ऊपर 'हाई टेंशन वायर' होने की वजह से उसे रद्द कर दिया गया। उल्लेखनीय है कि बिलाल मस्जिद में नमाज़ के अलावा 65 बच्चों को हिन्दी और उर्दू व अन्य विषयों की पढ़ाई कराई जाती है।

सिर्फ़ बिलाल मस्जिद की ही ऐसी स्थिति नहीं है। होलम्बी कलां फ़ेज-2 में कुल 28 मन्दिर और 4 मस्जिद हैं, जो डी.डी.ए. की खाली ज़मीन पर बने हैं। तीन और मन्दिरों का ठीक इसी तरह निर्माण कार्य जारी है। 2007 से 2014 तक फ़ेज-2 के बिलाल मस्जिद या अन्य किसी भी मस्जिद को लेकर हिन्दू-मुस्लिम आबादी के बीच कभी कोई तनाव या विवाद नहीं रहा। पहली बार संघ परिवार के लोगों द्वारा उकसावेबाज़ी की शुरुआत 26 मई 2014 को मोदी सरकार के सत्तारूढ़ होने के बाद हुई। आँधी की वजह से बिलाल मस्जिद का छप्पर उड़ जाने और तिरपाल फट जाने के बाद बस्ती से चन्दा जुटाकर जब मस्जिद की मरम्मत की जा रही थी और तिरपाल डाला जा रहा था तो 3 जून 2014 को कुछ स्थानीय संघ कार्यकर्ता सौ लोगों की भीड़ लेकर मस्जिद में घुस गये। मरम्मत का काम उन्होंने रोक दिया और तिरपाल भी हटाते हुए हंगामा करने लगे। पुलिस को उन्होंने यह कहकर बुलाया कि यहाँ नया अवैध निर्माण किया जा रहा है, जबकि वहाँ सिर्फ आँधी से हुए नुकसान की मरम्मत की जा रही थी। पुलिस ने आकर मरम्मत का काम रोक दिया और मस्जिद की कमेटी के एक पदाधिकारी मो. निसार को ही चौकी पर ले जाकर उसके खिलाफ़ रिपोर्ट दर्ज कर ली। इसके बाद से नमाज़ खुले आसमान के नीच तिरपाल लगाकर होने लगी, लेकिन संघ के कार्यकर्ताओं द्वारा हिन्दू आबादी के बीच प्रचार और धार्मिक आधार पर गोलबन्दी का काम लगातार चलता रहा।

### 14-15 अगस्त 2015 की घटना और उसके बाद

बिलाल वेलफेयर सोसाइटी के लोगों ने पिछले 15 अगस्त को मस्जिद के सामने की खुली ज़मीन पर झण्डारोहण के कार्यक्रम की तैयारी की थी और एक टेण्ट तथा 100 कुर्सियाँ 14 अगस्त को लगा दी गयी थीं। लेकिन 14 अगस्त की रात को स्थानीय पुलिस चौकी इंचार्ज ने वहाँ पहुँचकर टेण्ट और कुर्सियाँ हटवा दीं और मस्जिद के इमाम का मोबाइल ज़ब्त कर लिया। उनका कहना था कि इसकी अनुमति नहीं है। स्थानीय मुस्लिम आबादी के लोगों का कहना था कि शहर की तमाम कालोनियों में नागरिक सार्वजनिक पार्कों में 15 अगस्त का आयोजन करते हैं और इसके लिए उन्हें किसी पूर्व अनुमति की ज़रूरत नहीं पड़ती, लेकिन पुलिस ने उनकी एक न सुनी।

15 अगस्त की सुबह 400-500 लोगों की भीड़ लेकर संघ और बजरंग दल के लोग (इस भीड़ में ज़्यादातर बाहरी लोग थे) मस्जिद पर पहुँचे और उग्र धार्मिक नारे लगाते हुए झण्डारोहण की कोशिश करने लगे। इस बार पुलिस ने अनुमति नहीं होने का तर्क नहीं दिया और भीड़ को हटाने की कोई कोशिश नहीं की। फिर यह तय हुआ कि दोनों समुदायों के पाँच-पाँच लोग झण्डारोहण कर दें। लेकिन झण्डारोहण के बाद भीड़ ने फिर उग्र धार्मिक नारे लगाये और मस्जिद के चारों ओर की जगह पर गंगाजल का छिड़काव किया। पुलिस सबकुछ चुपचाप देखती रही।

बस्ती के नागरिकों ने बताया कि संघ और बजरंग दल के लोगों ने 14 अगस्त को यह व्यापक प्रचार किया था कि मुसलमान बिलाल मस्जिद पर पाकिस्तान का झण्डा फहराने वाले हैं। 15 अगस्त की शाम को पुलिस ने फहराये हुए झण्डे को और डण्डे को ज़ब्त करके थाने पर रख लिया। लेकिन उसी दिन एक जला हुआ झण्डा लेकर संघ कार्यकर्ताओं ने व्यापक झूठा प्रचार किया कि मुस्लिम समुदाय ने राष्ट्रीय झण्डे को जलाया है। हालाँकि पुलिस ने बाद में स्पष्ट कर दिया कि फहराया गया झण्डा उसके पास सुरक्षित है।

15 अगस्त की घटना का माहौल संघ परिवार द्वारा काफी पहले से ही बनाया जा रहा था। उस दिन वहाँ भीड़ जुटाने के लिए शाहाबाद डेरी, बवाना, नरेला आदि निकटवर्ती क्षेत्रों के संघ कार्यकर्ताओं को पहले से ही मुस्तैद कर दिया गया था। संघ परिवार द्वारा योजनाबद्ध ढंग से यह सबकुछ किये जाने के मुस्लिम समुदाय के आरोप के जवाब में संघ के प्रांत प्रचार-प्रमुख राजीव तुली ने मीडिया को बताया, ''ये सभी आरोप आधारहीन हैं। स्थानीय मुस्लिम मस्जिद के सामने की जगह को क़ब्ज़ा करने की फ़िराक में हैं। मस्जिद अनधिकृत है। दरअसल ये लोग हमारे राष्ट्रीय झण्डे का अनादर करते हैं।'' बाहरी दिल्ली के डी.सी.पी. विक्रमजीत सिंह ने भी संघ के प्रांत प्रचार प्रमुख के सुर में सुर मिलाते हुए कहा कि मस्जिद सरकारी ज़मीन पर अवैध क़ब्ज़ा करके बना है। सच्चाई तो यह है कि होलम्बी कलां फ़ेज-2 में मौजूद कुल 28 मन्दिर भी सरकारी ज़मीन पर बिना किसी अलॉटमेण्ट या अनुमति के ही बने हुए हैं और तीन और ऐसे मन्दिर निर्माणाधीन हैं, फिर इस एक मस्जिद को ही मुद्दा क्यों बनाया जा रहा है।

### संघ के प्रचार के तरीके और आगे की तैयारियाँ

नौजवान भारत सभा की जाँच-पड़ताल टीम को इस इलाके में संघ परिवार की तैयारियों, तौर-तरीकों और योजनाओं के बारे में कई चौंकाने वाली जानकारियाँ मिलीं। घर-घर, मुँहा-मुँही और शाखाओं के दौरान प्रचार के परम्परागत तरीकों के अतिरिक्त संघ के स्थानीय अग्रणी कर्ताधर्ता विश्वसनीय लोगों की अन्दरूनी सर्किल का एक ह्वाट्सएप ग्रुप बनाकर उसके द्वारा आपस में लगातार सम्पर्क में रहते हैं, त्वरित सूचनाएँ पहुँचाते हैं और योजनाएँ बनाते हैं। इस ह्वाट्सएप ग्रुप का नाम 'RSS Haripur nagar' है और इसे चलाने वाला मुख्य व्यक्ति एक अग्रणी स्थानीय संघ कार्यकर्ता इन्द्रेश है (कैलाश, डा.प्रमोद, डा.रवि, राष्ट्रपाल झाकड़ा आदि इसमें अन्य अग्रणी लोग हैं)। उक्त व्हाट्सएप ग्रुप 15 अगस्त की घटना के पहले से ही सक्रिय है और 15 अगस्त से 29 अगस्त तक उनकी आपसी बातचीत का पूरा ब्योरा भी नौ.भा.स. की जाँच-पड़ताल टीम को कुछ अन्दरूनी सूत्रों से प्राप्त हुआ। (इंटरनेट पर पूरी रिपोर्ट के साथ इसे देखा जा सकता है)।

उन्हीं अन्दरूनी सूत्रों से पता चला कि होलम्बी कलां के पूरे मामले की ज़िम्मेदारी बजरंग दल को दे दी गयी है। बजरंग दल ने विगत 7 सितम्बर और 13 सितम्बर को मेट्रो विहार, फ़ेज-2 के ए ब्लॉक में अपनी गुप्त बैठकें कीं और आगे की योजना बनायी। योजना यह थी कि 25 सितम्बर को, या उसके आसपास, होलम्बी कलां में ''सबक सिखाने वाली'' कोई बड़ी कार्रवाई की जाये। इस कार्रवाई को अंजाम देने में अलीपुर, शाहाबाद डेरी, सन्नोठ और बवाना से सौ-डेढ़ सौ बाहरी लड़के लाये जाने थे। इन सभी निकटवर्ती क्षेत्रों में भी बजरंग दल और संघ की अन्दरूनी गुप्त तैयारियाँ जोर-शोर से चल रही हैं। 7 सितम्बर की मीटिंग में लोगों में तलवारें बाँटने की योजना रखी गयी थी। बाद में इस योजना का खुलासा हो जाने के बाद इस कार्यक्रम को बदल दिया गया।

(पेज 10 पर जारी)

## बिहार में मोदी और संघ परिवार की नीतियों की करारी हार

# यह फासीवाद के विरुद्ध लड़ाई को और व्यापक व धारदार बनाने का समय है!

(पेज 1 से आगे)

डालने के प्रति ज़्यादा उत्साह दिखाते हैं। इसका यही संकेत है कि बिहार में आम मेहनतकश मतदाताओं की बहुसंख्या ने मोदी सरकार और संघ परिवार की नीतियों को खारिज कर दिया।

यह दलील दी जा सकती है और यह बेबुनियाद भी नहीं है कि आम मतदाता किसी पार्टी की नीतियों की अच्छाई-बुराई जाँचकर वोट नहीं देता। जातिगत और धार्मिक आधार पर होने वाले ध्रुवीकरण के अलावा पैसे और ताक़त का जोर भी वोट डलवाने में अहम भूमिका निभाता है। लेकिन इसके बावजूद यह ध्रुवीकरण भाजपा गठबन्धन के पक्ष में क्यों नहीं हो सका, जबकि भाजपा के चुनाव प्रबन्धकों ने हर हथकण्डा आजमाने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी। पैसे की ताक़त के साथ ही समाज के दबंग और प्रभुत्वशाली तबकों का भी अधिक समर्थन उसीके साथ था।

इन आधारों पर बिहार चुनाव के नतीजों के बाद यह कहना ग़लत नहीं होगा कि मतदाताओं की बहुसंख्या ने भाजपा गठबन्धन को नकार दिया है। तो क्या उसने महागठबन्धन के दलों को वास्तविक समर्थन दिया है और उनसे उसे अपने जीवन में बदलाव आ जाने की उम्मीद है? नहीं, यह सोचना भी ग़लत होगा। दरअसल, यह विकल्पहीनता का चुनाव था। मतदाता इस बारे में किसी भ्रम के शिकार नहीं हैं। आधी सदी से ज़्यादा समय के तजुर्बों ने उनके सामने यह बिल्कुल साफ कर दिया है कि कोई भी पूँजीवादी चुनावी पार्टी उनकी आकांक्षाओं पर खरी नहीं उतरती। लालू प्रसाद यादव और नीतीश कुमार के ढाई दशक के शासन को भी लोग अच्छी तरह से जानते हैं। लेकिन फिर भी चुनाव के समय मतदाताओं की सोच यह होती है कि जब कोई ऐसा विकल्प सामने नहीं है जो उनकी आकांक्षाओं को सही मायने में पूरा करे तो क्यों न दो बुराइयों में से कम बुराई वाले को चुन लिया जाये। महागठबन्धन का चुनाव इसी तरह कम बुराई का चुनाव था। यह लालू-नीतीश-काँग्रेस में आस्था जताना या उनकी नीतियों का समर्थन नहीं है।

बिहार चुनाव में मोदी की हार से संघी संगठन अपनी हरकतों से बाज़ आ जायेंगे यह ख़ुशफ़हमी कर्नाटक में टीपू सुल्तान की जयन्ती के विरोध में किये गये उनके उत्पात और गिरीश कर्नाड जैसे सम्मानित लेखक और कलाकार को जान से मारने की धमकियों के बाद दूर हो जानी चाहिए। मोदी सरकार की जनविरोधी आर्थिक नीतियों में बदलाव की उम्मीद करने का भी कोई आधार नहीं है। चुनाव के ठीक बाद भाजपा सरकार ने खेती, पशुपालन, रक्षा, बैंकिंग, खुदरा व्यापार और निर्माण उद्योग सहित 15 महत्वपूर्ण क्षेत्रों को 49 से लेकर 100 प्रतिशत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिए खोलकर इनमें साम्राज्यवादी पूँजी की घुसपैठ का रास्ता साफ़ कर दिया। कहने की ज़रूरत नहीं कि विदेशी पूँजी के आने से मज़दूरों, कर्मचारियों, छोटे किसानों और छोटे दुकानदारों की हालत और बदतर ही होगी। नरेन्द्र मोदी और संघ परिवार का सत्ता में आना जिस गहराते पूँजीवादी संकट का परिणाम है उसमें कोई कमी नहीं आयी है और पूँजीपतियों के जिस एजेण्डा को लागू करने के लिए उन्हें सत्ता में लाया गया है उस पर और भी ज़ोर-शोर से अमल करने के सिवा उनके पास कोई रास्ता नहीं है। इन नीतियों के कारण पैदा होने वाले जनता के विरोध को बेअसर करने और उसे आपस में बाँटने के लिए यह भी ज़रूरी है कि संघ परिवार के घनघोर दकियानूसी और बर्बर कार्यक्रमों को लागू करने और समाज में ज़हर फैलाने की उनकी हरकतों को भी खुली छूट दी जाये।

इसके साथ ही यह भी ज़रूरी है कि बिहार में विजयी महागठबंधन के "महानायक" के "महान" अतीत पर एक नज़र डाल ली जाये। यह याद दिलाना ज़रूरी है कि कुछ ही समय पहले तक नीतीश कुमार की नरेन्द्र मोदी के साथ गलबहियाँ मीडिया की सुर्खियों में रहती थी। जिन नीतीश कुमार से बहुत से लोग सामाजिक न्याय की आस लगा रहे हैं उन्होंने नवउदारवादी नीतियों को बिहार में इतनी कुशलता से लागू किया कि पूँजीवादी बुद्धिजीवियों से लेकर कॉरपोरेट मीडिया तक उन पर फ़िदा रहते थे। यह भी हमें समझना होगा नवउदारवाद ने ही फासीवाद के लिए उर्वर ज़मीन तैयार की है। फासीवाद और साम्प्रदायिकता के ख़िलाफ़ लड़ाई वह नीतीश कुमार भला क्या लड़ेंगे जो गुजरात नरसंहार के दौरान वाजपेयी सरकार की कैबिनेट में मंत्री थे। गुजरात के मासूमों की लाशों पर सवारी करके जब 2003 में मोदी गुजरात के मुख्यमंत्री बने तो नीतीश कुमार ने बधाई देते हुए कहा था, "मैं उम्मीद करता हूँ कि नरेन्द्र मोदी गुजरात तक ही सीमित नहीं रहेंगे। उनकी सेवाओं की ज़रूरत तो पूरे देश को है"। नीतीश के "सुशासन" के दौरान बिहार में अल्पसंख्यकों के ख़िलाफ़ फ़ार्बिसगंज में हुई बर्बर घटना को भी याद रखना होगा। रणवीर सेना द्वारा अंजाम दिये गये दलितों के हत्याकाण्डों की जाँच के लिए गठित अमीरदास आयोग का क्या हश्र 'सुशासन बाबू' के राज में हुआ इसे भी नहीं भूलना चाहिए।

मगर फिर भी, चुनाव नतीजों ने भगवा बिग्रेड के मंसूबों पर एक करारी चोट तो की ही है। राज्यसभा में बहुमत हासिल करके जीएसटी और आर्थिक ''सुधार'' के अन्य क़ानूनों को संसद से पारित करा लेने की उनकी उम्मीद फिलहाल टूट गयी है। कई रिपोर्टों के अनुसार संघ परिवार के रणनीतिकारों ने यह पहले ही भाँप लिया था कि बिहार में उनकी राह कठिन है लेकिन वे मतदाताओं का मूड भाँपने में बुरी तरह नाकाम रहे। दुनिया में फासिस्टों के अति-आत्मविश्वास का गुब्बारा अतीत में भी इसी तरह फुस्स होता रहा है। शिखर से वे धड़ाम से नीचे गिरते रहे हैं और भरमुँह माटी लेते रहे हैं। संघ परिवार के रणनीतिकार इस बार बुरी तरह गच्चा खा गये। अर्थव्यवस्था की तरक्की के बारे में झूठे आँकड़े देकर, दुनिया भर में देश का नाम ऊँचा करने के देशभक्तिपूर्ण दावे करके और सुनहरे भविष्य के हवाई वादे करके आम जनता को हमेशा बहकाया नहीं जा सकता। रोज़ी-रोटी के मसले आम जनता के बुनियादी मसले हैं। जज़्बाती मसले उभाड़कर कुछ समय के लिये चाहे इन बुनियादी मसलों को दबा दिया जाये लेकिन यह लम्बे समय तक दबे नहीं रह सकते। हर किस्म की फासिस्ट राजनीति की इमारत भावनात्मक मुद्दों की बुनियाद पर खड़ी होती है और इस पोपली बुनियाद के धसकते देर नहीं लगती। इस चुनाव में भी यही हुआ।

लगातार दो चुनावों में बुरी तरह हारने के बाद संघ परिवार को बेशक थोड़े समय के लिए अपने उत्पाती तत्वों को कुछ पीछे खींचना पड़ेगा। लेकिन यह मानने का कोई कारण नहीं है कि देश के सामाजिक-सांस्कृतिक ताने-बाने को भगवा रंग में रंगने के संघ परिवार के एजेण्डे में कोई बदलाव आयेगा। केन्द्र की सत्ता में बैठकर शिक्षा और संस्कृति के विभिन्न क्षेत्रों में जिस तेजी के साथ संघ परिवार अपना एजेण्डा आगे बढ़ा रहा था, उसकी रणनीति में कोई बदलाव भले ही आ जाये, लेकिन वह रुकने वाला नहीं है। दूसरे, जिस हद तक सामाजिक-सांस्कृतिक ताने-बाने में उनकी घुसपैठ हो चुकी है वहाँ से ये अपने आप पीछे हटने वाले नहीं हैं। इसलिए चुनावी ''धर्मनिरपेक्ष'' ताकतों की चुनावी सफलताओं से निश्चिन्त होकर नहीं बैठा जा सकता। यह आत्मघाती होगा। हमें मेहनतकश अवाम की गोलबन्दी का काम पहले की तरह ही जारी रखना होगा। हिन्दुत्ववादी फासिस्ट ताकतों को भारतीय पूँजीवाद और विश्व पूँजीवाद के जिन संकटों ने खाद-पानी दिया था वे संकट न केवल मौजूद हैं वरन आने वाले दिनों में और गहरायेंगे। फासिस्ट ताकतों को देश का शासक पूँजीपति वर्ग ज़ंजीर में बँधे शिकारी कुत्ते की तरह न केवल पालता-पोसता रहेगा वरन जब भी जरूरत होगी ज़ंजीर खोल देने में हिचकिचायेगा नहीं। इसलिए फासीवाद से मुकाबले की तैयारियाँ जारी रखनी होंगी और उनमें तेज़ी लानी होगी।

नरेन्द्र मोदी की अगुवाई में भाजपा-नीत राजग की सरकार बनने के पहले देश की जनता को तमाम गुलाबी सपने दिखाये गये थे। यह दावा किया गया था कि महँगाई और बेरोज़गारी की मार को ख़त्म किया जायेगा; पेट्रोल-डीज़ल से लेकर रसोई गैस की कीमतें घटा दी जायेंगी; रेलवे भाड़ा नहीं बढ़ाया जायेगाऋ भ्रष्टाचार पर लगाम कसी जायेगी और स्विस बैंकों से काला धन वापस लाया जायेगा और ''अच्छे दिन आयेंगे!'' लेकिन सरकार बनने के डेढ़ साल में देश की आम मेहनतकश जनता को समझ आने लगा है कि किसके ''अच्छे दिन'' आये हैं! एक तरफ़ फ़र्ज़ी आँकड़ों के ज़रिये अर्थव्यवस्था की तरक्की के झूठे दावे किये जा रहे हैं और मुद्रास्फीति घटने के आँकड़े चमकाये जा रहे हैं, दूसरी तरफ़ आम लोग दाल और तेल से लेकर जीने की हर ज़रूरी चीज़ की बेलगाम महँगाई से तबाह हैं। रसोई गैस से लेकर रेल भाड़ा तक महँगा हो चुका है, दवाओं की कीमतें बेतहाशा बढ़ी हैं। श्रम क़ानूनों के तहत मज़दूरों को मिली मामूली सुरक्षा को भी छीन लिया गया है और मज़दूरों के अधिकारों में और कटौती के क़ानून बनाने की तैयारी जारी है। पब्लिक सेक्टर की मुनाफ़ा कमाने वाली कम्पनियों का निजीकरण किया जा रहा है, जिसका अर्थ होगा बड़े पैमाने पर सरकारी कर्मचारियों की छँटनी; ठेका प्रथा को 'अप्रेण्टिस' आदि जैसे नये नामों से बढ़ावा दिया जा रहा है; नयी भर्तियाँ हो नहीं रही हैं और अगर कहीं हो भी रही हैं, तो स्थायी कर्मचारी के तौर पर नहीं बल्कि ठेके पर। तमाम कम्पनियों को अब पूरी क़ानूनी छूट दे दी गयी है कि वे मज़दूरों व कर्मचारियों से खुलकर ओवरटाइम करायें और जब जी चाहे उन्हें लात मारकर बाहर कर दें। विश्व बाज़ार में पेट्रोलियम उत्पादों की कीमतों में भारी गिरावट के बावजूद मोदी सरकार ने उस पर तमाम टैक्स और शुल्क बढ़ाकर उनकी कीमतें जस-की-तस रखी हैं। विदेशों से काला धन वापस लाने के वादे को तो भाजपा अध्यक्ष अमित शाह पहले ही चुनावी जुमला घोषित कर चुके हैं। रुपये को मज़बूत करना तो दूर रुपये की कीमत में रिकार्ड गिरावट से महँगाई और ज़्यादा बढ़ रही है। सत्ता में आते ही केन्द्र और राज्य स्तर पर मोदी सरकार के मन्त्रियों ने भ्रष्टाचार और गुण्डागर्दी के पुराने रिकार्ड तोड़ने शुरू कर दिये हैं। दंगों और बलात्कार के आरोपी नेता-मन्त्री मोदी सरकार में बैठे हुए हैं!

दूसरी तरफ़, अम्बानी, अडानी, बिड़ला, टाटा जैसे देश के सबसे बड़े धन्नासेठों को एक से बढ़कर एक तोहफ़े दिये जा रहे हैं। उन्हें तमाम करों से छूट दे दी गयी है; लगभग मुफ़्त बिजली, पानी, ज़मीन, ब्याजरहित कर्ज़, श्रम क़ानूनों से छूट दी जा रही है। देश की प्राकृतिक सम्पदा जो कि वास्तव में देश की जनता की सामूहिक सम्पत्ति है, उसे औने-पौने दामों पर उन्हें सौंपा जा रहा है, और प्राकृतिक संसाधनों के अन्धाधुन्ध शोषण के लिए पर्यावरण की रक्षा सम्बन्धी नियमों में मनमाने बदलाव किये जा रहे हैं या उनके उल्लंघन की छूट दी जा रही है। ''स्वदेशी'', ''देशभक्ति'', ''राष्ट्रवाद'' का ढोल बजाते हुए सत्ता में आये मोदी ने अपनी सरकार बनने के साथ ही बीमा, रक्षा जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों समेत तमाम क्षेत्रों में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को इजाज़त दी थी। अब इस सिलसिले को और तेज़ कर दिया गया है। 'व्यापार करने में आसानी' के नाम पर सरकार ने पूँजीपतियों की मनमानी पर अंकुश लगाने वाले सभी नियमों को ढीला कर दिया है ताकि वे बेरोकटोक इस देश के लोगों की मेहनत और संसाधनों को लूटकर मुनाफ़ा पीट सकें और उसमें से कुछ टुकड़े इन हरामख़ोरों को भी दे सकें। देशी-विदेशी कम्पनियों को देश की प्रकृति और जनता को लूटने की खुली छूट को ही 'मेक इन इण्डिया' अभियान का नाम दिया गया है! देश के ऊपरी 15 फ़ीसदी अमीरों के लिए सारी सुविधाएँ, टैक्स से छूट और रियायतें दी जा रही हैं! उनके लिए चमकते-दमकते शॉपिंग मॉल, मल्टीप्लेक्स, एम्यूज़मेण्ट पार्क हैं! और देश की 85 फ़ीसदी आम जनता को बताया जा रहा है कि उन्हें ''विकास'' के लिए बिना आवाज़ उठाये फैक्ट्रियों, दुकानों, होटलों, ऑफिसों में खटना होगा! देश के अमीरज़ादों के विकास के लिए मेहनतकश जनता को पेट पर पट्टी बाँधकर ''हिन्दू राष्ट्र'' का निर्माण करना होगा! और अगर कोई अमीरज़ादों के ''अच्छे दिनों'' पर सवाल खड़ा करता है, तो उसे राष्ट्र-विरोधी और देशद्रोही क़रार दे दिया जायेगा!

किसी चुनावी जीत-हार से फासीवाद के ख़िलाफ़ लड़ाई में कोई निर्णायक अन्तर आयेगा इस भ्रम को दूर करने के लिए इस तथ्य को ध्यान में रखना ज़रूरी है कि जिस दौर में भारत में नवउदारवादी नीतियों का वर्चस्व क़ायम हुआ, वही हिन्दुत्ववादी फासीवाद के प्रभाव-विस्तार का भी दौर रहा है। बाबरी मस्जिद में राम जन्मभूमि का ताला खुलवाना, आडवाणी की रथयात्रा, गुजरात 2002, पूरे देश में साम्प्रदायिक दंगों, तनाव और अल्पसंख्यक आबादी के लगातार बढ़ते अलगाव का सिलसिला और फिर मोदी का सत्ता में आना — इस पूरे राजनीतिक घटनाक्रम को नवउदारवादी नीतियों के निर्णायक वर्चस्व की स्थापना की प्रक्रिया से जोड़कर आसानी से देखा जा सकता है। नवउदारवादी नीतियों को लागू करने से और ''नरम हिन्दुत्व'' की लाइन लागू करने से कांग्रेस को भी कोई परहेज़ नहीं रहा है। छोटे पूँजीपतियों और पूँजीवादी भूस्वामियों की क्षेत्रीय पार्टियों को भी इन नीतियों से या भाजपा से गाँठ जोड़ने से कोई परहेज़ नहीं रहा है, लेकिन इन दलों के पीछे न तो कोई धुर प्रतिक्रियावादी सामाजिक आन्दोलन है न ही कोई कैडर आधारित ढाँचा है। इसलिए, ज़मीनी स्तर पर जाकर साम्प्रदायिक आधार पर जनसमुदाय को बाँटने और मज़दूरों की संगठित शक्ति या उनके संगठित होने की सम्भावनाओं पर चोट करने के मामले में ये पार्टियाँ भाजपा और संघ परिवार जितनी प्रभावी कभी नहीं हो सकतीं। ये सत्ता में आ भी जायें तो नवउदारवाद की नीतियों पर अमल में तो कोई फर्क नहीं पड़ेगा, लेकिन समाज में नीचे तक जनता को बाँटने के लिए और मेहनतकश जनता की एकजुटता पर चोट करने के लिए हिन्दुत्ववादी फासिस्ट तब भी उसी व्यापकता और बर्बरता के साथ काम करते रहेंगे। किसी भी सूरत में भाजपा की किसी चुनावी शिकस्त का मतलब फासिस्ट ताकतों का पीछे हटना मानना एक खतरनाक मुग़ालते का शिकार होना होगा। दूसरी ओर, यह भी याद रखना होगा कि संसदीय वामपंथी दलों ने मज़दूर वर्ग को अर्थवाद व संसदीय

(पेज 10 पर जारी)

# यह फासीवाद के विरुद्ध लड़ाई को और व्यापक व धारदार बनाने का समय है!

(पेज 9 से आगे)

विभ्रमों में उलझाकर अराजनीतिक और निश्शस्त्र बनाने में एकदम वही भूमिका निभायी है जो 1920 और 1930 के दशक में यूरोपीय सामाजिक जनवादी पार्टियों ने निभायी थी। जर्मनी में हिटलर और इटली में मुसोलिनी के नेतृत्व में फासीवाद के सत्ता में आने में इन पार्टियों की भी भूमिका थी। भारत में संसदीय वामपंथियों ने हिन्दुत्ववादी कट्टरपंथ विरोधी संघर्ष को मात्र चुनावी हार-जीत का और कुछ रस्मी प्रतीकात्मक विरोध का मुद्दा बना दिया है। और अब ये तृणमूल स्तर पर मेहनतकशों को साथ लेकर फासिस्ट कैडरों की सरगर्मियों की प्रभावी काट कर सकने की क्षमता खो चुके हैं। जहाँ तक क्रान्तिकारी वाम की बिखरी शक्तियों का सवाल है, अपनी विचारधारात्मक कमज़ोरियों के कारण और लम्बे समय से जारी बिखराव-ठहराव के कारण फिलहाल वे प्रभावी हस्तक्षेप की स्थिति में नहीं हैं। ऐसे में फासिज़्म विरोधी नयी लामबन्दी की एकदम नये सिरे से ही शुरुआत करने की कठिन चुनौती हमारे सामने है। पूँजी की शक्तियों ने राज्य के उपकरणों के ज़रिए अपना वर्चस्व स्थापित करने के साथ ही, वर्गों के युद्ध में अपने फासिस्ट गुर्गों के ज़रिए समाज में कई रूप में अपनी खन्दकें खोद रखी हैं और बंकर बना रखे हैं। इनसे मुकाबले के लिए हमें वैकल्पिक शिक्षा, प्रचार और संस्कृति के अपने तंत्र के ज़रिए प्रति-वर्चस्व के लिए जूझना होगा, मज़दूर वर्ग को राजनीतिक स्तर पर शिक्षित-संगठित करना होगा और मध्य वर्ग के रैडिकल तत्वों को उनके साथ खड़ा करना होगा। संगठित क्रान्तिकारी कैडर शक्ति की मदद से हमें भी अपनी खन्दकें खोदकर और बंकर बनाकर पूँजी और श्रम की ताक़तों के बीच मोर्चा बाँधकर चलने वाले लम्बे वर्गयुद्ध में पूँजी के भाड़े के गुण्डे फासिस्टों से मोर्चा लेना होगा। यह रणनीति राजनीति के क्षेत्र में ही नहीं, बल्कि समाज और संस्कृति के हर मोर्चे पर हमें लागू करनी होगी।

मोदी सरकार के कारनामों से मोहभंग के कारण देश भर में मेहनतकश लोग और छात्र-नौजवान सड़कों पर उतरकर अपना विरोध दर्ज करा रहे हैं। संघ परिवार द्वारा फैलाये जा रहे नफ़रत के ज़हर के ख़िलाफ़ भी बुद्धिजीवियों-लेखकों-कलाकारों से लेकर आम नागरिक भी लगातार आवाज़ उठा रहे हैं। इस विरोध में भी छात्र-नौजवान अगली कतारों में हैं। नरेन्द्र मोदी का पाखण्डी मुखौटा तार-तार हो चुका है। देश ही नहीं, विदेशों में भी उसकी थू-थू हो रही है और देश में संघ परिवार द्वारा फैलाये जा रहे घृणा के वातावरण की कड़ी आलोचना हो रही है। लेकिन महज़ इतने से ही साम्प्रदायिक फासीवाद अपने दड़बे में नहीं सिमट जायेगा।

बिहार में नीतीश और लालू के नेतृत्व में नयी सरकार बनने के बाद किसी भी रूप में यह मानना भोलापन होगा कि देश भर में लागू हो रही घोर जनविरोधी आर्थिक नीतियों से अलग नीतियाँ वहाँ लागू होंगी। संकटग्रस्त अर्थव्यवस्था में जितनी गुंजाइश हो उस हद तक कुछ प्रतीकात्मक कल्याणकारी कार्यक्रम लागू हो सकते हैं लेकिन सरकार बदलने से मेहनतकशों की ज़िन्दगी पर कोई फर्क नहीं पड़ने वाला है। उनकी तबाही-बदहाली का सिलसिला बदस्तूर जारी रहेगा। छँटनी-बेकारी-महँगाई और सामाजिक उत्पीड़न का दानव उनका पीछा करता रहेगा।

नयी सरकार का बनना मेहनतकश आबादी के लिये साँपनाथ की जगह नागनाथ का कुर्सी पर बैठना ही है। लुटेरों के एक गिरोह की जगह दूसरे गिरोह के लुटेरे उन्हें लूटेंगे। देशी-विदेशी पूँजीपतियों की लूट न केवल जारी रहेगी बल्कि वह और बढ़ती ही जायेगी। उदारीकरण-निजीकरण की नीतियाँ न तो सरकारों की साज़िश का नतीजा हैं न ही दुनिया के पूँजीपतियों की सनक। ये विश्व पूँजीवाद के विकास के आन्तरिक तर्क से पैदा हुई हैं। ये बाज़ार और मुनाफ़े की व्यवस्था की गतिकी के नियमों से संचालित हो रही हैं। मौजूदा पूँजीवादी ढाँचे के भीतर इनका कोई विकल्प नहीं है। इन नीतियों को केवल एक ही सूरत में उलटा जा सकता है। मौजूदा पूँजीवादी ढाँचे को तहस-नहस करके। बाज़ार और मुनाफ़े पर टिकी समूची पूँजीवादी व्यवस्था को ही नेस्तनाबूद करके। मज़दूरों को इसी राह पर आगे बढ़ने की तैयारी करनी है।

# उत्तर-पश्चिमी दिल्ली की मज़दूर बस्तियों में साम्प्रदायिक तनाव भड़काने की संघ परिवार के संगठनों की कोशिशें

(पेज 8 से आगे)

### नरेला में भी साम्प्रदायिक आग भड़काने की तैयारियाँ जारी

नरेला उत्तर-पश्चिमी दिल्ली का पुराना इलाका है जहाँ पुराने गाँव, नये मध्यवर्गीय इलाकों और पुरानी मज़दूर बस्तियों के अतिरिक्त नयी पुनर्वास कालोनियाँ भी हैं। नौ.भा.स.की जाँच-पड़ताल के दौरान हमें नरेला में भी साम्प्रदायिक तत्वों की सरगर्मियों का पता चला।

विगत 12 सितम्बर को नरेला के पास रेलवे लाइन पर एक लड़के की कटी हुई लाश मिली, जिसे लेकर मेट्रो विहार में यह प्रचार किया गया कि यह वास्तव में एक हत्या थी जिसे मुस्लिमों ने अंजाम दिया था। ऐसा ही प्रचार नरेला की कुछ मज़दूर बस्तियों में भी किये जाने का तथ्य बजरंग दल के अन्दरूनी स्रोतों से हमें प्राप्त हुआ। संघ परिवार टोटकों-अन्धविश्वासों का भी किस प्रकार इस्तेमाल करता है, इसका पता इस तथ्य से चलता है कि मृतक लड़के के परिवार वालों से कहा गया कि वे किसी मुस्लिम परिवार के घर के आगे झाड़ू मार दें।

नरेला के पॉकेट-आठ में सर्वाधिक मुस्लिम आबादी है। इसी इलाके में मस्जिद जैसे किसी मुद्दे को तूल देने की योजना है। इसके लिए मुख्यत: हिन्दी भाषी क्षेत्रों से आये मज़दूर इलाकों में प्रचार और सांगठनिक काम करके आधार बनाया जा रहा है तथा माहौल तैयार किया जा रहा है।

### भलस्वा डेरी की जे.जे.कालोनी में दंगा भड़काने के लिए योजनाबद्ध सरगर्मियाँ

भलस्वा डेरी की जे.जे. कालोनी 1999-2000 में बसायी गयी, जिसमें जहाँगीरपुरी, रोहिणी और निज़ामुद्दीन से उजड़ी आबादी का पुनर्वास हुआ। जहाँगीरपुरी से आयी आबादी में मुस्लिम परिवार अधिक थे। कालोनी के बी-6 और बी-7 ब्लॉक में मुस्लिम परिवार अधिक रहते हैं जिसके ठीक सामने बीस फुटा सड़क के दूसरी तरफ डी-1 ब्लॉक में हिन्दू आबादी की बहुलता है। अन्य ब्लॉकों में मिली-जुली आबादी है।

यहाँ पर दो-तीन वर्षों पहले आर.एस.एस. की शाखा लगने की शुरुआत हुई। डी ब्लॉक में एक मन्दिर है जिसके ठीक सामने एक मस्जिद है जो बी-7 ब्लॉक में आती है। कुछ माह पहले मन्दिर में कुछ बाहरी लड़कों का आना-जाना शुरू हुआ। फिर दो माह पहले मन्दिर का पुजारी अचानक ग़ायब हो गया। ग़ौरतलब है कि स्थानीय मुस्लिम आबादी से उसका कभी कोई वैमनस्य नहीं रहा, बल्कि सामान्य मेल-जोल के रिश्ते रहे। पुजारी के ग़ायब होने के बाद आरती का संचालन कुछ नौजवान करने लगे जो आर.एस.एस. के लोग थे। हिन्दुओं के बीच संघ कार्यकर्ताओं ने यह सुनियोजित प्रचार किया कि पुजारी को मुसलमानों ने ही ग़ायब कराया है। मुस्लिम आबादी के इलाके को यहाँ बंगाली टोला नाम से जाना जाता है। संघ कार्यकर्ताओं ने यह ख़ूब प्रचार किया है कि यहाँ रहने वाले लोग अवैध बंगलादेशी प्रवासी हैं।

डी-1 ब्लॉक के मन्दिर में हर मंगलवार को हनुमान चालीसा का पाठ, विशेष आरती और जयकारा होते थे, लेकिन मस्जिद के अज़ान के समय से न तो उसका टकराव होता था, न ही उसके माइक के वॉल्यूम को लेकर नमाज़ियों को कभी कोई शिकायत रही। जबसे मंदिर के कार्यक्रम का संचालन आर.एस.एस. के लोगों की कमेटी करने लगी, उसके बाद ही समय के टकराव और माइक के वॉल्यूम को लेकर अन्तरविरोध पैदा हुए। मन्दिर के पास ही कुछ मुस्लिमों की छोटी-छोटी दुकानें हैं।

हर मंगलवार को हनुमान चालीसा पाठ व आरती में शामिल होने के लिए बाहर से 50 नौजवान बजरंग दल के एक व्यक्ति के नेतृत्व में आते थे, जिसके ख़िलाफ़ आसपास के थानों में कई मामले दर्ज हैं। स्थानीय लोगों ने यह भी बताया कि मंदिर की आरती का संचालन करने वाले आर.एस.एस. के आदमी के भाई को गत 4 सितंबर को पुलिस ने एक मुस्लिम लड़के पर चाकू से हमला करने के आरोप में गिरफ़्तार किया है और उसकी अबतक जमानत नहीं हुई।

### 8 सितम्बर 2015 की घटना

8 सितम्बर को पहले की ही तरह अज़ान और हनुमान चालीसा पाठ-जयकारा की आवाज़ें जब एक दूसरे से टकराने लगीं, उसी समय पत्थरबाज़ी शुरू हो गयी। दोनों तरफ से दस-पंद्रह मिनट तक पत्थर चले। पुलिस के आने पर स्थिति नियंत्रण में आयी। कुछ मुस्लिम परिवारों ने बताया कि उसी दौरान पाँच-छ: बाइकों पर बाहर से कुछ लोग आये, जो मुस्लिम युवकों के इकट्ठा हो जाने से लौट गये। कुछ लोगों ने बताया कि पुलिस ने कुछ बाइकें ज़ब्त की हैं जिनमें चाकू-कट्टा आदि थे। जब हमने इस दावे की पुष्टि करनी चाही तो पुलिस ने कुछ बताने से इनकार कर दिया। थाने पर फोन करने पर एस.एच.ओ. से बात करने को कहा गया, एस.एच.ओ. ने डी.सी.पी. से बात करने को कहा और डी.सी.पी. के कार्यालय ने कुछ भी नहीं बताया। हमने जितने लोगों से बातचीत की, सभी ने उनका कहना था कि हनुमान चालीसा, आरती और जयकारे की ऊँची आवाज़ में अज़ान की आवाज़ दब जाती है। दोनों समुदायों के बीच एक समझौते के तहत तय हुआ कि 8 बजे अज़ान होगी और 8-15 बजे आरती का समय होगा, लेकिन मंदिर की ओर से इस समझौते का पालन नहीं किया गया।

यही बताया कि पुलिस बाहर से आने वालों की पहचान से वाक़िफ़ है, फिर भी उसने अज्ञात लोगों के ख़िलाफ़ एफ.आई.आर. दर्ज़ की है।

स्थानीय आबादी से व्यापक सम्पर्क के बाद यह स्पष्ट हो गया कि न केवल मुस्लिम परिवारों को, बल्कि वर्षों से साम्प्रदायिक सद्भाव के माहौल में जी रही हिन्दुओं की अधिकांश आबादी को भी आर.एस.एस. के बाहरी लोगों द्वारा आकर साम्प्रदायिक तनाव भड़काने की इस घटना पर क्षोभ है लेकिन ज़्यादा लोग सामने आकर कुछ कहने से बचते हैं, जबकि एक छोटी आबादी जो उग्र साम्प्रदायिक प्रचार से प्रभावित है, वह बढ़चढ़कर बोलती है।

संघ के लोग यह प्रचार कर रहे थे कि मुस्लिमों ने यह खुलेआम धमकी दी है कि बक़रीद के बाद हिंदुओं पर हमला बोलकर मारकाट मचाया जायेगा, इसलिए जवाबी कार्रवाई की पूरी तैयारी होनी चाहिए। आर.एस.एस. से जुड़े कुछ स्थानीय नौजवानों ने बताया कि बक़रीद के आसपास भण्डारा का कार्यक्रम आयोजित किया जायेगा और मुसलमान यदि भैंसा काटेंगे तो हम सुअर काटेंगे क्योंकि वाल्मीकि पूजा में हमारे एक हिन्दू भाई के यहाँ भी सुअर की बलि दी जाती है। इन अफ़वाहों और भड़काऊ प्रचारों से सतह के नीचे साम्प्रदायिक तनाव लगातार सुलग रहा है।

उत्तर-पश्चिमी दिल्ली के शाहाबाद डेरी, सूरज पार्क, राजा विहार, जहाँगीरपुरी, समयपुर बादली, बादली गाँव आदि अन्य मज़दूर इलाकों में भी इन दिनों बजरंग दल और संघ की सरगर्मियाँ काफी तेज़ हैं।

यह रिपोर्ट उत्तर-पश्चिमी दिल्ली के बारे में है, लेकिन पिछले एक साल में घटी घटनाओं के आधार पर यह मानने के पर्याप्त आधार हैं कि पूरी दिल्ली के मज़दूर इलाकों में साम्प्रदायिकता का ज़हर तेज़ी से फैलाया रहा है और हिन्दुत्ववादी ताक़तें मज़दूर इलाकों के अमानवीकृत-लम्पट तत्वों के बीच से और निम्न पूँजीवादी वर्गों के बीच से अपने उत्पातियों के गिरोह या गुण्डा वाहिनियों में भरती करने के लिए विशेष रूप से सक्रिय हैं। ठीक उसी तरह जैसे हिटलर ने ऐसे ही इलाक़ों से अपने 'स्टॉर्म ट्रूपर्स' की भरती की थी। साथ ही, मज़दूरों की वर्गीय एकजुटता को धार्मिक आधार पर तोड़कर और साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण को बढ़ाकर वे निजीकरण-उदारीकरण की नीतियों का कहर झेल रहे मज़दूरों के सम्भावित प्रतिरोध की ज़मीन को कमज़ोर बनाने का काम कर रही हैं। अरविन्द केजरीवाल ऊपरी तौर पर तो भाजपा की साम्प्रदायिक नीतियों पर 'ट्विटर' पर अक्सर ट्वीट करते रहते हैं लेकिन दिल्ली में उनकी सरकार और पार्टी संघ परिवार की इन हरकतों को रोकने के लिए कुछ नहीं कर रही।

आम जनता की एकजुटता पर साम्प्रदायिक शक्तियों के इस सुसंगठित-सुनियोजित हमले का मुकाबला करने के लिए हम सभी जनपक्षधर शक्तियों से एकजुट होने, सक्रिय होने, साम्प्रदायिक कट्टरपंथ के विरुद्ध व्यापक एवं सघन प्रचार अभियान चलाने तथा विशेष तौर पर मज़दूरों और युवाओं को तृणमूल स्तर पर संगठित करने का आह्वान करते हैं। हम अपील करते हैं कि सभी जनपक्षधर बुद्धिजीवी, मज़दूर संगठन और छात्र-युवा संगठन मिलकर दिल्ली पुलिस और सरकार पर साम्प्रदायिक गुण्डा गिरोहों के खिलाफ़ सख़्त क़दम उठाने के लिए ज़बर्दस्त जन दबाव बनायें।

**- नौजवान भारत सभा,**
**उत्तर-पश्चिमी दिल्ली**

(यह रिपोर्ट 20 सितम्बर 2015 को तैयार की गयी थी)

# बाबाओं का मायाजाल और ज़िन्दगी बदलने की लड़ाई के ज़रूरी सवाल

हमारे प्यारे भारत वर्ष को यदि कृषिप्रधान के साथ-साथ बाबाप्रधान देश भी कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। यह कहने का कारण भी बड़ा ही साफ़ है। क्योंकि यहाँ पर आपको डाल-डाल पर सोने की चिड़ियाँ तो बसेरा करती नहीं दिखेंगी किन्तु यत्र-तत्र-सर्वत्र बाबा (और बाबियाँ भी) जरूर नज़र आ जायेंगे। आप इनके कपड़ों से धोखा खाकर इन्हें एक लकड़ी से हाँकने का प्रयास करेंगे तो गच्चा खा सकते हैं। इनकी तमाम किस्में हैं और ये किस्में एक-दूसरी से पूरी तरह अलहदा भी हैं। सभी का भक्तों का अपना-अपना साम्राज्य है तथा साम्राज्य को कायम रखने के अपने-अपने विशिष्ट किस्म के हथकण्डे।

आपको बाबाओं के जंगल में कहीं बलात्कारी आसाराम बापू व नारायण साईं दिखेंगे जो खुद तो जेल में हैं लेकिन बच्चे उनकी महानता को जानने के लिए उनके जीवन के बारे में सरकारी पाठ्यक्रम में पढ़ रहे हैं जबकि वे परदे के पीछे से अपने मुकदमों के गवाहों पर जानलेवा हमला करवा रहे हैं और उनकी हत्याएँ करा रहे हैं। कहीं आपको रामपाल दास के दर्शन होंगे जिसने ठगी को नये आयामों तक पहुँचा दिया था और हरियाणा राज्य के साथ घमासान का रण छेड़ दिया था। इनकी महत्ता आज भी बरकरार है और आप स्वयं इनकी पेशी के समय रोहतक की सड़कों पर इनके भक्तों के करुण क्रन्दन को सुन सकते हैं और अपने गुरु की गाड़ी की टायर-रज की पैकिंग करते हुए इन्हें साक्षात देख भी सकते हैं क्योंकि पद-रज तक इनकी पहुँच को सरकार ने थोड़ा मुश्किल बना दिया है। आपको कहीं आशुतोष जी महाराज दिखेंगे जिनके भक्त पिछले दिनों अपने गुरु जी की लाश इस उम्मीद के साथ लिये बैठे थे कि गुरु जी समाधि से बाहर निकलेंगे लेकिन खेद है कि उक्त महाशय समाधि से सीधे मोक्ष धाम पधार गये और भक्तों को निराश कर गये। आपको इस पवित्र भूमि पर श्री श्री रविशंकर जैसे उच्च वर्गीय बाबा भी नज़र आयेंगे जिन्होंने खाये-पिये लोगों को जीने की कला सिखाते हुए बाई प्रोडक्ट के तौर पर देश की भोली-ग़रीब जनता को पैसा कमाने की कला सिखलाने की भी पूरी कोशिश की। आपको यहाँ गुरमीत राम रहीम जी के दर्शन भी हो जायेंगे जिनके ऊपर बलात्कार, गवाहों की हत्या, 300 चेलों को नपुंसक बनाने के आरोप लगे हैं किन्तु ये महोदय अब भी 'मैसेंजर ऑफ गॉड' बने हुए हैं। हमेशा नाक पकड़कर पेट को अन्दर-बाहर करते प्रतीत होने वाले बाबा रामदेव के तो कहने ही क्या! पातंजलि ऋषि ने कभी ख़्वाब में भी नहीं सोचा होगा कि उनका कोई शिष्य योग को कामधेनु गाय में बदलकर इससे अथाह धन दुह सकेगा। काले धन के मसले पर धरती-आसमान एक कर देने वाले बाबा रामदेव मोदी सरकार बनने के बाद लगता है मौन व्रत में चले गये हैं।

कहीं निर्मल बाबा तो कहीं कृपालु महाराज, कहीं मोरारी बापू तो कहीं भीमानन्द, कहीं सारथी बाबा तो कहीं प्रेमानन्द, कहीं बिन्दू बाबा तो कहीं नित्यानन्द; कहने की जरूरत नहीं है कि आपको अपने साम्राज्य बसाये, दन्द-फन्द और गन्द में लोट लगाते इतने बाबा मिल जायेंगे कि जिनके परिचय मात्रा से सैकड़ों पन्ने काले किये जा सकते हैं। बस कसर रह गयी थी एक राधे माँ की! खुद को दुर्गा का अवतार बताने वाली ये मोहतरमा फ़िल्मी गानों की धुन पर छोटे-छोटे कपड़ों में अश्लील किस्म का नृत्य करते हुए अपने असली रूप में भी अपने भक्तों को दर्शन देती रहती हैं। विभिन्न आरोप व छोटे-मोटे मुकदमे लगने के बाद इनके सितारे आजकल थोड़ा गर्दिश में चले गये हैं लेकिन इनके भक्तों की श्रद्धा-भक्ति-विश्वास की भावना आज भी देखते ही बनती है।

जिस तरह से हर जगह की अपनी विशेषता होती है वैसे ही पुण्य भूमि भारत खण्डे की अपनी विशेषता है। यहाँ श्रद्ध वानम् लभते ज्ञानम् और गुरु बिन ज्ञान नहीं आदि सूक्तियों को पूरी इज़्ज़त बख्शी जाती है। यहाँ अमीरों और ग़रीबों के लिए अलग-अलग किस्म के बाबा भी हैं और बहुत सारे डेरे, आलीशान मन्दिर, आश्रम व कुम्भ मेलों जैसे आयोजन व शुभ स्नान भी हैं।

अब सवाल यह उठता है कि **इतनी पुण्यात्माएँ और ईश्वर के इतने एजेण्ट होने के बावजूद हमारे यहाँ पर इतनी ग़रीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, कुपोषण व बदहाली का आलम क्यों है?** ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में लम्बे डग भरे जाने के बावजूद आज भी हमारे यहाँ लोग झाड़-फूँक, पवित्र स्नानों, रूढ़िवादी मूल्यों और अन्धविश्वास से क्यों नहीं निकल पा रहे हैं? पढ़ा लिखा तबका भी अतार्किकता व कूपमण्डूकता की गर्त में क्यों डूबा हुआ है?

पूँजीवादी व्यवस्था आज पूरी तरह से धर्म का पूँजीवादीकरण कर चुकी है। जनता को तमाम दिक्कतों के पैदा होने के असली कारण का नहीं पता चले, वह गरीबी-भुखमरी-बेरोजगारी के लिए व्यवस्था को कटघरे में न खड़ा कर दे इसलिए उस पर भाग्यवाद का जुआठा लाद दिया गया है। तमाम पाखण्डी धार्मिक बाबा, पण्डे-पुजारी, मुल्ले-मौलवी जनता की चेतना को कुन्द करने के लिए ही काम करते हैं। पूँजीवादी व्यवस्था जनता पर अपना वर्चस्व कायम रखने के लिए धर्म का सहायक के रूप में इस्तेमाल करती है। तमाम तरह के बगुलाभक्त पाखण्डी खुद ऐशो-आराम का जीवन जीते हैं जबकि जनता को त्याग, आत्मसुधार और परलोक को सुधारने का पाठ पढ़ाते रहते हैं। वर्ग चेतना के अभाव में व्यापक मेहनतकश जनता मौजूदा व्यवस्था की जटिलता को नहीं समझ पाती। समस्याओं के असली कारणों की पड़ताल करके इन्हें हल करने के बजाय अपनी भौतिक ज़रूरतों की पूर्ति के लिए धर्म-कर्म के चक्कर में आ जाने, भाग्य के सामने नतमस्तक हो जाने का आधार ख़ुद यह व्यवस्था मुहैया कराती है। असुरक्षा और भय एक काल्पनिक शक्ति में विश्वास का कारण बनते हैं और जब असुरक्षा और भय के कारणों की शिनाख़्त करके इन्हें समाप्त कर लिया जायेगा तो किसी काल्पनिक शक्ति में इनके हल तलाशने की ज़रूरत भी खुद-ब-खुद समाप्त हो जायेगी और काल्पनिक शक्ति का अस्तित्व भी समाप्त हो जायेगा।

भारत जैसे देश में, जो पुनर्जागरण-प्रबोधन से अछूता रहा है, ज्ञान-विज्ञान-तर्कणा के मूल्य आम मेहनतकश जनता की पहुँच से तो दूर हैं ही लेकिन यहाँ पर पढ़ा-लिखा कहे जाने वाला तबका भी इन जीवन मूल्यों से कोसों दूर है। चाहे हम यूरोप, अमेरिका, रूस, चीन कहीं का भी उदाहरण लें, हर समाज में बदलाव करने के शुरुआती प्रयासों में मध्य वर्ग की एक सकारात्मक भूमिका रही है। किन्तु हमारे यहाँ का मध्य वर्ग इतना लिजलिजा, रीढ़विहीन, ओज-तेज हीन और कायर है कि इन सब चीज़ों में दुनिया के सामने यह अपने आप में ही एक मिसाल है। भाषा से लेकर संस्कृति तक के क्षेत्र में आज भी औपनिवेशिक अतीत व गुलामी के चिन्ह आसानी से देखे जा सकते हैं। कला-साहित्य-संस्कृति व मीडिया जैसे तमाम क्षेत्रों में पैसों पर बिकने वाले भाँड भरे पड़े हैं। इन्हें जनवाद, तार्किकता, आलोचनात्मक विवेक, तर्कणा जैसी चीजें दूसरे ग्रहों से आयी प्रतीत होती हैं। जनता की ज़रूरतों का, उसकी दिक्कतों-तकलीफ़ों का इल्म करना तो दूर, उल्टा इस तरह की चीज़ों से मुँह चुरा लेने की प्रवृत्ति आम बात है। और तो और जब जनता के पक्ष में आवाज़ उठाने वाले बुद्धिजीवियों का कट्टरतावादी ताकतों द्वारा क़त्ल किया जाता है तो उसी समय विभिन्न समाचार चैनलों पर हमेशा की तरह ही राशिफल बताया जा रहा होता है, भूत-प्रेतों के किस्से-कहानियाँ चलायी जा रही होती हैं या टी.आर.पी. के लिए किसी नयी सनसनी की तलाश की जा रही होती है। हाल के दिनों में नरेन्द्र दाभोलकर, गोविन्द पानसरे, एम.एम. कालबुर्गी की नृशंस हत्याएँ हुई लेकिन व्यापक जनता को तब तक पता भी नहीं चला जब तक इनका देशभर में विरोध नहीं हुआ। किन्तु सिनेमाई भाँड-भड़ुक्कों, नेताओं, क्रिकेटरों की छोटी-सी बात राष्ट्रीय ख़बर बन जाती है!

आज का दौर एक तरफ जहाँ अँधेरे-निराशा का दौर है वहीं दूसरी तरफ यह चुनौतीपूर्ण भी है। हर समाज बदलता है और बदलाव को छोड़कर कुछ भी सनातन नहीं है। किन्तु यह भी उतना ही सच है कि यह अपने आप नहीं बदलता, प्रत्येक समाज को इन्सान ही बदलते हैं। बाबाओं और इनके पैदा होने की ज़मीन को तभी समाप्त किया जा सकता है जब मुनाफ़ा-केन्द्रित पूँजीवादी व्यवस्था के स्थान पर मानव-केन्द्रित व्यवस्था की स्थापना की जाये। जब लोगों की भौतिक ज़रूरतें पूरी होंगी तो अलौकिक शक्तियों का भौतिक आधार भी धीरे-धीरे समाप्त होता चला जायेगा। लेकिन व्यवस्था परिवर्तन तक हाथ पर हाथ धरकर इन्तज़ार नहीं करना होगा बल्कि तुरन्त संजीदगी और धैर्य के साथ ज्ञान-विवेक-तर्कणा और जनवादी मूल्यों का लगातार व अनथक ढंग से प्रचार-प्रसार करना होगा। अपनी ताक़त को प्रभावी ढंग से इस्तेमाल करते हुए अपने हक-हुक़ूक़ की प्रत्येक ज़ब्ती पर फिर से मुक्का ठोंकना होगा। अँधेरे की ताक़तों से लगातार लोहा लेना होगा, और सच को बार-बार जनता के बीच ले जाना होगा।

**– अरविन्द**

# चाय बागानों के मज़दूर भयानक ज़िन्दगी जीने पर मजबूर

सर्दी हो या गर्मी चाय के बिना ज़्यादातर लोगों का चलता नहीं। जहाँ ग़रीब लोग चालीस-पचास रुपए पाव वाली चायपत्ती से काम चला लेते हैं वहाँ अमीर लोग हज़ारों रुपये किलो वाली उम्दा चाय का स्वाद चखते हैं। पर क्या आपने कभी ये सोचा है कि चाय का ये स्वाद लोगों तक पहुँचाने वाले चाय बागानों के मज़दूरों की ज़िन्दगी है?

चलिए, आपको असम और पश्चिम बंगाल के चाय बागानों में ले चलते हैं। पहाड़ों की ढलानों पर टाटा, लिप्टन, ब्रुक बॉण्ड, टेटली आदि ब्राण्डों के इन खूबसूरत बागानों में काम करते हैं बदसूरत बस्तियों में रहने वाले वो मज़दूर जिन्हें 12-14 घंटे की मेहनत के बाद 80-90 रुपये दिहाड़ी मिलती है। चाय की पत्तियाँ तोड़ते-तोड़ते इनकी पीठ अकड़ जाती है। सूरज उगने से पहले काम शुरू हो जाता है और सूरज छिपने से पहले वो काम बंद नहीं कर सकते।

इतनी कम मज़दूरी में उनका गुज़ारा कैसे चलता होगा ये सोच कर कँपकँपी होती है। ग़रीबी इतनी है कि माँ-बाप अपनी नाबालिग बेटियों को नौकरी दिलाने वालों के साथ दिल्ली, मुम्बई जैसे शहरों में भेजने पर मजबूर होते हैं। ये लड़कियाँ अकसर धोखेबाज़ों का शिकार होती हैं। उनको वेश्यावृत्ति के धन्धे में धकेल दिया जाता है या नाममात्र वेतन पर काम कराया जाता है।

चाय बागानों के मज़दूरों में कुपोषण बड़े पैमाने पर फैला है। बीमारियों ने उनको घेर रखा है। उनको अच्छे भोजन, दवा-इलाज ही नहीं बल्कि आराम की बहुत ज़रूरत है, पर उनको इनमें से कुछ भी नहीं मिलता। सरकारी बाबुओं की रिटायरमेंट की उम्र से पहले-पहले बहुत सारे मज़दूरों की तो ज़िन्दगी समाप्त हो जाती है। चाय बागानों में काम करने वाली 95 प्रतिशत औरतें खून की कमी का शिकार होती हैं। यहाँ औरतों के साथ-साथ बच्चों और बुजुर्गों से बड़े पैमाने पर काम लिया जाता है क्योंकि उनको ज़्यादा पैसे नहीं देने पड़ते और आसानी से दबा के रखा जा सकता है। बीमारी की हालत में भी चाय कम्पनियाँ मज़दूरों को छुट्टी नहीं देतीं। कम्पनी के डॉक्टर से चैकअप करवाने पर ही छुट्टी मिलती है और कम्पनी के डॉक्टर जल्दी छुट्टी नहीं देते। अगर बीमार मज़दूर काम करने से मना कर देता है तो उसको निकाल दिया जाता है। बेरोज़गारी इतनी है कि काम छूटने पर जल्दी कहीं और काम नहीं मिलता, इसलिए बीमारी में भी मज़दूर काम करते रहते हैं। उनकी बस्तियाँ बीमारियों का घर हैं। पर उनके पास इसी नर्क में रहने के सिवा कोई रास्ता नहीं होता।

1947 के बाद भारत में चाय की खेती का रकबा चालीस फ़ीसदी बढ़ा है और पैदावार ढाई सौ गुना बढ़ गयी है। भारत में दुनिया की 30 फ़ीसदी चाय की पैदावार होती है और चाय उत्पादन में यह दुनिया में चौथे स्थान पर है। यहाँ चाय का सलाना कारोबार 10 हज़ार करोड़ रुपये का है। चाय उद्योग में 10 लाख से ज़्यादा मज़दूर काम करते हैं जिनमें से आधी गिनती औरतों की है। चाय उद्योग लगातार बढ़ रहा है, चाय कम्पनियों की पाँचों उँगलियाँ घी में है, पर इसके लिए अपना खून-पसीना बहाने वालों की हालत दर्दनाक है, वो सभी सुख-सुविधाओं से वंचित हैं।

प्रबंधकों का रवैया मज़दूरों के प्रति कितना अमानवीय है इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि जब कोलम्बिया कानूनी स्कूल की मानवीय अधिकार संस्था के लोग असम के बोरहट प्लांट में मज़दूरों की हालत की जाँच-पड़ताल करने गये तो प्रबन्धकों ने उनको मज़दूरों से बात करने से रोकते हुए कहा कि मज़दूरों से बात करने की क्या ज़रूरत, उनकी अकल कम है और वो तो बस ढोर-डांगर जैसे हैं। असम के पवई प्लांट में दवा का छिड़काव करते समय एक मज़दूर की मौत का मुआवज़ा और काम में सुरक्षा की माँग पर आपस में सलाह करने जुटे मज़दूरों पर मालिकों के इशारे पर पुलिस गोली चलाकर दो मज़दूरों को मार डालती है। मगर ज़ोर-ज़बर्दस्ती और दमन से मज़दूरों के हक की आवाज़ को दबा पाने में मालिकान नाकाम रहे हैं। भयानक लूट और शोषण को चुनौती देते हुए मज़दूरों के संघर्ष बार-बार उठ खड़े होते हैं। अभी कुछ ही दिन पहले केरल के मुन्नार में चाय बागान मज़दूरों ने पुरानी दलाल यूनियनों को धता बताकर एक जुझारू लड़ाई लड़ी है, जिसमें स्त्री मज़दूरों ने सबसे बढ़-चढ़कर भूमिका निभायी।

**– लखविन्दर**

# शहीद भगतसिंह के 108वें जन्मदिवस पर पूँजीवाद और साम्प्रदायिक फासीवाद से लड़ने का संकल्प

### नौजवान भारत सभा की उत्तर-पश्चिमी दिल्ली इकाई द्वारा एक सप्ताह की 'पैग़ाम-ए-इंक़लाब मुहिम'

इस मुहिम के तहत शाहाबाद डेयरी, सूरज पार्क, राजा विहार, रोहिणी सेक्टर-27 की बस्ती, बवाना के रिहायशी इलाकों में साइकिल जुलूस निकाला गया। जगह-जगह नुक्कड़ सभाएं करने के साथ गुरुशरण सिंह के नाटक 'हवाई गोले' पर आधारित 'देख फकीरे लोकतंत्र का फूहड़ नंगा नाच' का भी मंचन किया गया। 28 सितम्बर को शाहाबाद डेयरी में सुबह प्रभात फेरी, और नुक्कड़ नाटक व सभा किया गया।

सभा में अभियान की संयोजिका कविता कृष्णपल्लवी ने कहा कि भगतसिंह ने एक समतामूलक, शोषण मुक्त समाज की स्थापना के लिए पूँजीवाद-साम्राज्यवाद विरोध का नारा दिया था और मज़दूरों-मेहनतकशों के राज की कल्पना की थी। जबकि आज के दौर में मेहनतकशों को लूटने-खसोटने वाली तमाम ताक़तों का एक नापाक गठबन्धन बन चुका है, जिसमें देशी-विदेशी पूँजीपतियों के साथ-साथ तमाम चुनावी मदारी और देश की नौकरशाही शामिल है। ऐसे में शोषित-उत्पीड़ित जनता के लिए भी एक फौलादी क्रान्तिकारी एकजुटता क़ायम करना ज़रूरी है। लेकिन उस एकजुटता को भी ख़त्म करने के लिए हिन्दुत्ववादी फासिस्ट संगठन साज़िशें कर रहे हैं। उनके खूनी मंसूबों को जनता के सामने बेनकाब करना क्रान्तिकारी शक्तियों का मुख्य कार्यभार है।

पैग़ाम-ए-इंक़लाब मुहिम के अन्तिम दो दिन दक्षिण दिल्ली के जामियानगर के विभिन्न इलाकों, गफ्फार मंज़िल, बाटला हाउस आदि में नुक्कड़ सभा व नुक्कड़ नाटक किया गया। दिन में आई.एन.ए. स्थित विकास भवन के सामने भी नुक्कड़ नाटक किया गया। इस दौरान लोगों के बीच बड़े पैमाने पर पर्चे बाँटे गये।

### गाज़ियाबाद में 'रंग लायेगा शहीदों का लहू' अभियान

नौजवान भारत सभा ने गाज़ियाबाद में दो दिन का 'रंग लायेगा शहीदों का लहू' अभियान चलाया।

27 तथा 28 सितम्बर को विजयनगर की माता कॉलोनी और भूड़ भारत नगर में नौभास के कार्यकर्ताओं ने प्रभात फेरी निकाली और क्रान्तिकारी गीतों के ज़रिये भगतसिंह के विचारों को लोगों तक पहुँचाया। 27 सितम्बर को शहीद भगतसिंह पुस्तकालय पर 'जाति-धर्म के झगड़े और भगतसिंह की विरासत' विषय पर विचार-चर्चा का आयोजन किया गया। विचार-चर्चा में जाति-प्रथा के पैदा होने के कारण, शुरुआती दौर में जाति-प्रथा के स्वरूप, समय के साथ इसमें आये बदलावों, और वर्तमान दौर में जाति-प्रथा को बनाये रखने में पूँजीवादी व्यवस्था की भूमिका पर खुलकर चर्चा हुई। किस तरह आज 21वीं सदी में भी जातिवादी मानसिकता लोगों के दिमागों में जड़ जमाये हुए है और दलित तथा पिछड़ी जातियों को क़दम-क़दम पर मानसिक तथा शारीरिक जाति-आधारित उत्पीड़न का शिकार होना पड़ता है इस पर विस्तार से बात हुई। जनता को धर्म के नाम पर बाँटने की साम्प्रदायिक संगठनों की घृणित चालों पर भी बातचीत हुई। नौभास की ओर से तपीश ने कहा कि जनता को रोजी-रोटी, गरीबी, बेरोज़गारी जैसे उसके असली मुद्दों से भटकाकर उसकी वर्ग-एकजुटता को तोड़ना ही साम्प्रदायिक ताकतों का असली मक़सद होता है। इन साम्प्रदायिक ताकतों से लड़ने के लिए आम घरों के युवाओं तथा नागरिकों को आगे आना होगा।

28 सितम्बर को सुबह के समय एम.एम.एच कॉलेज गेट पर पुस्तक एवं पोस्टर प्रदर्शनी लगायी गयी। कॉलेज के छात्रों में क्रान्तिकारी आन्दोलन और वर्तमान समय की समस्याओं के बारे में जानने-समझने की गहरी जिज्ञासा के साथ ही बेरोज़गारी, सीटों में कटौती, फीस बढ़ोतरी और आरक्षण जैसे मुद्दों पर विस्तार से बातचीत की। नौभास के कार्यकर्ता ने कहा कि आरक्षण का मुद्दा दरअसल रोज़गार से जुड़ा हुआ है और लोगों में यह भ्रम फैलाया जा रहा है कि उन्हें नौकरी न मिलने का कारण आरक्षण है। लेकिन पिछले दस साल के ही आँकड़ों से यह साफ़ है कि सरकारी और प्राइवेट नौकरियों में भारी कटौती की गयी है जो कि लगातार जारी है। इसलिए आरक्षण हटा देने से युवाओं को नौकरी मिल जायेगी यह कोरा झूठ है। छात्रों-युवाओं को आरक्षण के नाम पर आपस में लड़ने की बजाय नि:शुल्क और एकसमान शिक्षा और रोज़गार गारण्टी की माँगों पर व्यापक एकजुटता क़ायम करने की शुरुआत करनी चाहिए।

27 तथा 28 सितम्बर को शाम के समय माता कॉलोनी और भूड़ भारत नगर इलाके में नुक्कड़ सभाएँ की गयीं और पर्चा वितरण किया गया।

### हरियाणा में जनअभियान व सांस्कृतिक कार्यक्रम

नौजवान भारत सभा, हरियाणा ने शहीद-ए-आज़म भगतसिंह के 108वें जन्म दिवस के अवसर पर विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन किया। कार्यक्रमों की शुरुआत 26 सितम्बर से चैशाला गाँव (कलायत, कैथल) में क्रान्तिकारी प्रचार अभियान से की गयी। गाँव में क्रान्तिकारी प्रचार के दौरान नुक्कड़ सभाएँ करते हुए व्यापक परचा वितरण किया गया। 27 सितम्बर को सुबह कलायत में नुक्कड़ सभाएँ करते हुए प्रचार अभियान चलाया गया जिसमें विभिन्न वक्ताओं ने पूँजीवादी व्यवस्था का भण्डाफोड़ किया और बताया कि भगतसिंह ने आज जैसी व्यवस्था कायम करने के लिए शहादत नहीं दी थी। उनका सपना एक समतामूलक समाज का था। तमाम चुनावबाज पार्टियाँ जनता को वोट बैंक की राजनीति के लिए एक मोहरे के रूप में इस्तेमाल करती हैं। आज जनता को न केवल अपनी रोज-रोज की समस्याओं के लिए एकजुट होना होगा बल्कि शहीदों के सपनों के भारत के निर्माण के लिए भी जुटना होगा। 27 सितम्बर को ही शाम को गाँव मोहलखेड़ा में सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

28 सितम्बर को सुबह नरवाना के नेहरू पार्क में पर्चा वितरण किया गया और शहीद भगतसिंह की मूर्ति पर माल्यार्पण किया गया। इसके बाद नेहरू पार्क से भगतसिंह चौक (जो लेबर चौक भी है) तक जुलूस निकाला गया। चौक पर भगतसिंह, राजगुरु, सुखदेव की मूर्तियों पर माल्यार्पण करने के बाद हुई सभा में वहाँ मौजूद मज़दूर साथियों तक भगतसिंह के इंक़लाबी सन्देश को पहुँचाया गया।

### लुधियाना में मज़दूरों के बीच भगतसिंह की याद

नौजवान भारत सभा, टेक्सटाइल-हौज़री कामगार यूनियन व कारखाना मज़दूर द्वारा मज़दूर पुस्तकालय, ई.डब्ल्यू.एस. कालोनी में हावर्ड फास्ट के उपन्यास 'आदि विद्रोही' पर आधारित फिल्म 'स्पार्टकस' प्रदर्शित की गई। 25 से 28 सितम्बर तक लुधियाना के विभिन्न इलाकों में पैदल मार्च, नुक्कड़ सभाएँ करते हुए पर्चा वितरण के जरिए शहीद भगतसिंह की सोच लोगों तक पहुँचायी गयी।

सभाओं में कहा गया कि आज देश के मज़दूरों, मेहनतकशों, नौजवानों को जिन भयंकर हालातों से गुजरना पड़ रहा उनमें भगतिसंह को याद करना बेहद ज़रूरी है। हमें यह याद करना होगा कि भगतसिंह की लड़ाई महज़ विदेशी हुकूमत के खिलाफ नहीं थी बल्कि देशी शोषक वर्गों के ख़िलाफ़ भी थी। आज क्रान्तिकारियों की शहादतों से प्रेरणा लेनी होगी, उनके विचारों से सीखना होगा और क्रान्तिकारी विचारों को जन-जन तक पहुँचाना होगा।

वक्ताओं ने कहा कि सभी तरह के धार्मिक कट्टरपंथी लोगों को आपस में लड़ाने की कोशिशें तेज़ कर चुके हैं। संघ परिवार-भाजपा के नेतृत्व में हिन्दुत्ववादी कट्टरपंथी सबसे खतरनाक साम्प्रदायिक ताकत है। इन साम्प्रदायिक ताकतों का असल निशाना जनता का लूट-दमन जारी रखना है। हमें हाकिमों की साज़िशों को समझना और नाकाम करना होगा।

### मानखुर्द (मुम्बई) में शहीद भगतसिंह पुस्तकालय की शुरुआत

मानखुर्द में नौजवान भारत सभा द्वारा शहीद भगतसिंह पुस्तकालय की शुरुआत की गई। इस कार्यक्रम में इलाके भर से बच्चों, नौजवानों व नागरिकों ने शिरकत की तथा कुछ शिक्षण संस्थानों के छात्र भी कार्यक्रम में शामिल हुए।

नौभास के नारायण ने कहा कि हमारे संसाधन-सम्पन्न देश की बहुसंख्यक आबादी आज भी भयंकर ग़रीबी, बेरोज़गारी व भुखमरी झेल रही है क्योंकि सारे संसाधनों पर मुट्ठीभर पूँजीपतियों की जमात कुण्डली मारकर बैठ गयी है जो अपने मुनाफ़े की ख़ातिर मेहनतकशों को दिन-रात खटाती है। आज टी.वी., फिल्म उद्योग, इंटरनेट से लेकर सभी प्रकार के प्रचार माध्यम बच्चों व नौजवानों को स्वार्थी, हिंसक और विकृत बनाने वाली चीजें मनोरंजन के नाम पर परोस रहे हैं जिससे समाज में तरह-तरह के अन्धविश्वास व विकृतियाँ फैल रही हैं। मुनाफे की इस व्यवस्था का विकल्प खड़ा करने की लम्बी लड़ाई की तैयारी के लिए ज़रूरी है कि नौजवानों का व्यक्तित्व समृद्ध हो। स्वस्थ मनोरंजन के साथ-साथ बच्चों व नौजवानों में ऊँचे जीवन मूल्य और वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित किया जाये। ऐसी पुस्तकें इस काम के लिए बहुत ज़रूरी हैं जो तर्कसंगत वैज्ञानिक विचारों से लैस हों और आम मेहनतकश लोगों की जिन्दगी की सच्चाइयों और उनके बदलाव के रास्तों से नौजवानों को रूबरू करायें।

पुस्तकालय में अखबार, पत्रिकाओं के साथ-साथ मराठी, हिन्दी व अंग्रेजी भाषा में देश-दुनिया के विख्यात लेखकों की किताबें उपलब्ध रहेंगी। छोटे बच्चों के लिए विशेष तौर पर उनकी कल्पनाओं को उड़ान देने वाली किताबें रखी गयी हैं।

**– बिगुल संवाददाता**

# महान अक्टूबर क्रान्ति की जयन्ती पर बिगुल मज़दूर दस्ता द्वारा वज़ीरपुर और गुड़गाँव में कार्यक्रम

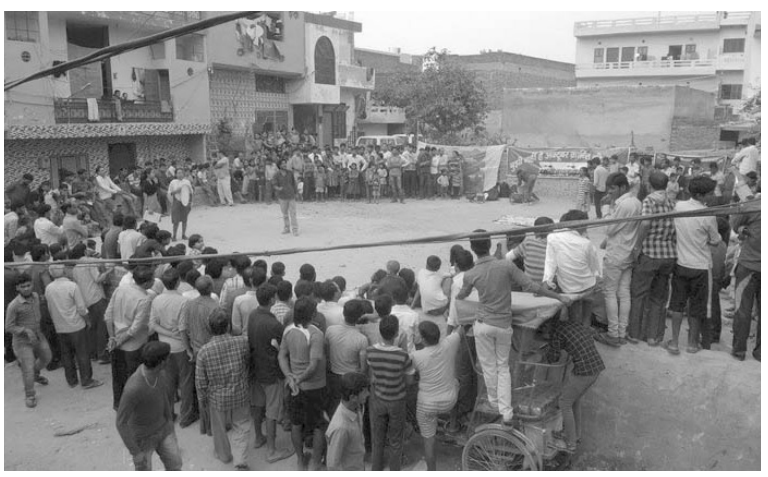

बिगुल मज़दूर दस्ता ने अक्टूबर क्रान्ति की 98वी वर्षगांठ पर 7 और 8 नवम्बर को दिल्ली के वज़ीरपुर स्थित राजा पार्क और गुडगाँव के शक्ति पार्क में सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया। इस कार्यक्रम में गीतों और नाटक के ज़रिये मज़दूरों को 1917 में रूस में हुई अक्टूबर क्रान्ति के सुनहरे इतिहास से परिचित कराया गया जब मज़दूरों ने पूँजीपतियों-जागीरदारों की सत्ता को उखाड़ फेंककर अपना राज क़ायम किया था। **'अक्टूबर क्रान्ति की जली मशाल'** नाटक में यह दर्शाया गया कि किस तरह ज़ार के तख्तापलट के बाद केरेन्स्की के नेतृत्व में बनी अस्थायी सरकार जो वास्तव में पूँजीपतियों की ही सरकार थी को बोल्शेविकों ने लड़कर सत्ता से हटाया और मज़दूर राज कायम किया। 1917 की अक्टूबर क्रान्ति के बाद किस तरह मज़दूरों ने अपने आप को सोवियतों में संगठित कर एक ऐसे समाज का निर्माण किया जहाँ भुखमरी, कुपोषण, बेरोज़गारी, वेश्यावृत्ति जड़ से ख़त्म कर दी गयी, और सबको बराबरी का दर्जा दिया गया। यह सब केवल मज़दूरों-किसानों-मेहनतकशों के राज में ही सम्भव हो पाया। लोगों ने पूरे नाटक को बहुत रुचि से देखा। बिगुल मज़दूर दस्ता की शिवानी ने कहा कि मज़दूरों को आज फिर अपने हालात को बदलने के लिए अक्टूबर क्रान्ति के नए संस्करण रचने होंगे और मज़दूर संघर्षों के अपने गौरवशाली इतिहास से सबक लेते हुए अपनी लड़ाई की रणनीति तय करनी होगी। मज़दूरों के लिए एक कला प्रदर्शनी भी लगायी गयी जिसमे सोवियत पोस्टरों से लेकर समाजवादी यथार्थवाद से प्रभावित चित्र शामिल थे। वज़ीरपुर के कार्यक्रम में चार्ली चैप्लिन की प्रसिद्ध फ़िल्म 'मॉडर्न टाइम्स' भी दिखायी गयी।

**- बिगुल संवाददाता**

## युद्ध की विभीषिका और शरणार्थियों का भीषण संकट

# पूँजीवाद के पास आज मानवता को देने के लिए ये त्रासदियाँ ही बची हैं

पूँजीवाद अपने जन्मकाल से ही लोगों को उनकी आजीविका के साधनों से बेदखल करके और उनको दर-बदर कर एक इलाके से दूसरे इलाके, एक मुल्क से दूसरे मुल्क और यहाँ तक कि एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप तक पलायन करने के लिए मजबूर करता आया है। हालाँकि जब तक पूँजीवाद सामन्तवाद के ख़िलाफ़ संघर्ष कर रहा था उस समय तक उसके पास मानवता को देने लायक कुछ सकारात्मक मूल्य थे और और बेहतर जीवन के सपने थे तथा उसके आगमन से मानवता निश्चित रूप से एक उन्नत अवस्था में पहुँची, परन्तु आज यह व्यवस्था इतनी मानवद्रोही हो चुकी है कि इसके पास मानवता को देने के लिए विनाशकारी युद्धों और उनसे उपजी मानवीय त्रासदियों के सिवाय और कुछ नहीं बचा है। शरणार्थियों का संकट पूँजीवाद द्वारा पैदा की गयी ऐसी ही एक त्रासदी है जो पूँजीवाद की उम्र बीतने के साथ-साथ विकराल रूप लेती जा रही है।

पिछले महीने ऐलान कुर्दी नामक तीन वर्षीय शिशु की तुर्की में भूमध्यसागर के तट पर औंधे मुँह पड़ी लाश की हृदय विदारक तस्वीरें दुनिया भर में मीडिया एवं सोशल मीडिया की सुर्खियों में छाई रहीं। नन्हा ऐलान कुर्दी सीरिया में रहने वाले एक कुर्द परिवार का बच्चा था जो सीरिया में जारी साम्राज्यवादी हमले एवं गृहयुद्ध की वजह से समुद्री नाव से कनाडा में शरण लेने जा रहा था और नाव में क्षमता से अधिक लोग होने की वजह से वह डूब गयी। इस घटना के बाद यूरोप और अमेरिका के तमाम पूँजीवादी देशों के शासकों ने भी शरणार्थियों की समस्या पर जमकर घड़ियाली आँसू बहाये। मानवतावाद का मुखौटा लगाये इन पूँजीवादी शासकों और उनके टुकड़ो पर पलने वाली मुख्यधारा की मीडिया ने घड़ियाली आँसुओं की बाढ़ में इस नंगी सच्चाई को दबा दिया कि इस भयंकर त्रासदी के ज़िम्मेदार दरअसल वे ख़ुद हैं।

शरणार्थियों के मामले को देखने वाली संयुक्त राष्ट्र की संस्था

यूएनएचसीआर (यूनाइटेड नेशन्स हाई कमिशनर फॉर रिफ्यूजीज़) के मुताबिक दुनिया भर में शरणार्थियों की संख्या आज 6 करोड़ का आँकड़ा पार कर चुकी है जो अब तक के इतिहास में सबसे अधिक है। ग़ौरतलब है कि इन शरणार्थियों में अधिकांश बच्चे हैं। वर्ष 2014 में ही लगभग 1.4 करोड़ लोगों को गृह युद्ध एवं अन्य प्रकार की हिंसा की वजह से मजबूरन विस्थापित होना पड़ा जिनमें से 1.1 करोड़ लोग अपने-अपने देशों की सीमाओं के भीतर ही विस्थापित हुए जबकि 30 लाख लोगों को अपना वतन छोड़ना पड़ा। इस वर्ष तो यह संख्या और भी ज़्यादा बढ़ गयी होगी।

इतने बड़े पैमाने पर विस्थापन की वजह समझने के लिए हमें यह जानना होगा कि वे कौन से क्षेत्र हैं जहाँ से आज विस्थापन सबसे अधिक हो रहा है। आँकड़े इस बात की ताईद करते हैं कि हाल के वर्षों में जिन देशों में साम्राज्यवादी दखल बढ़ी है वही वे देश हैं जहाँ सबसे अधिक लोगों को विस्थापन की मार झेलनी पड़ रही है, मसलन सीरिया, अफ़गानिस्तान, इराक़ और लीबिया। पिछले डेढ़ दशक में इन देशों में अमेरिका के नेतृत्व में साम्राज्यवादी दखल से पैदा हुई हिंसा और अराजकता ने इन इलाकों में रहने वाले लोगों के लिए अस्तित्व का संकट पैदा कर दिया है। इस हिंसा में भारी संख्या में जानमाल की तबाही हुई है और जो लोग बचे हैं वो भी सुरक्षित जीवन के लिए अपने रिहायशी इलाकों को छोड़ने पर मजबूर कर दिये गये हैं। अमेरिका ने 2001 में अफ़गानिस्तान पर तथा 2003 में इराक़ पर हमला किया जिसकी वजह से इन दो देशों से लाखों लोग विस्थापित हुए जो आज भी पड़ोसी मुल्कों में शरणार्थी बनकर नारकीय जीवन बिताने को मज़बूर हैं। 2011 में मिस्र में हुस्नी मुबारक की सत्ता के पतन के बाद सीरिया में स्वत:स्फूर्त तरीके से एक जनबग़ावत की शुरुआत हुई थी जिसका लाभ उठाकर अमेरिका ने सऊदी अरब की मदद से इस्लामिक स्टेट नामक सुन्नी इस्लामिक कट्टरपंथी संगठन को वित्तीय और सैन्य प्रशिक्षण के ज़रिये मदद पहुँचाकर सीरिया के गृहयुद्ध को और भी ज़्यादा विनाशकारी बनाने में अपनी भूमिका निभायी जिसका नतीजा यह है कि 2011 के बाद से सीरिया में एक करोड़ से भी अधिक लोग विस्थापित हो चुके हैं जिनमें से 40 लाख लोग तो वतन तक छोड़ चुके हैं। वैसे पूँजीवाद के इतिहास से वाकिफ़ लोगों के लिए यह कोई नयी बात नहीं है। पिछली सदी में भी पूँजीवाद-साम्राज्यवाद ने दो विश्वयुद्धों एवं उसके बाद इज़रायल-फ़िलिस्तीन विवाद, कोरिया युद्ध, वियतनाम युद्ध, एवं सोमालिया, रवांडा, कांगो जैसे अफ्रीकी मुल्कों में क्षेत्रीय युद्धों को बढ़ावा देकर लाखों की संख्या में लोगों को विस्थापित होने के लिए मजबूर किया था।

पूँजीवादी देशों में शासक वर्गों के दक्षिणपंथी एवं वामपंथी धड़ों के बीच शरणार्थियों की समस्या पर बहस कुल मिलाकर इस बात पर केन्द्रित होती है कि शरणार्थियों को देश के भीतर आने दिया जाये या नहीं। सापेक्षत: मानवतावादी चेहरे वाले शासकवर्ग के वामपंथी धड़े से जुड़े लोग आमतौर पर शरणार्थियों के प्रति उदारतापूर्ण आचरण की वकालत करते हैं और यह दलील देते हैं कि शरणार्थियों की वजह से उनकी अर्थव्यवस्था को लाभ पहुँचता है। लेकिन शासकवर्ग के ऐसे वामपंथी धड़े भी कभी यह सवाल नहीं उठाते कि आखिर शरणार्थी समस्या की जड़ क्या है। वे ऐसा इसलिए नहीं करते क्योंकि उन्हें अच्छी तरह से पता है कि यदि वे ऐसे बुनियादी सवाल उठाने लगेंगे तो पूँजीवादी व्यवस्था कटघरे में आ जायेगी और उसका मानवद्रोही चरित्र उजागर हो जायेगा। सच तो यह है कि साम्राज्यवाद के युग में कच्चे माल, सस्ते श्रम एवं बाज़ारों पर क़ब्ज़े के लिए विभिन्न साम्राज्यवादी मुल्कों के बीच होड़ अवश्यम्भावी रूप से युद्ध की विभीषिका को जन्म देती है। यही नहीं संकटग्रस्त पूँजीवाद संकट से निजात पाने के लिए भी युद्ध का सहारा लेता है क्योंकि युद्धों में भारी पैमाने पर उत्पादक शक्तियों की तबाही पूँजीवाद के अतिउत्पादन के संकट के लिए संजीवनी का काम करती है। इसके अलावा हथियारों के विश्व-व्यापी व्यापार को क़ायम रखने के लिए भी यह ज़रूरी हो जाता है कि दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में छोटे या बड़े पैमाने के युद्ध या तनाव की स्थिति बनी रहे। यही वो भौतिक परिस्थितियाँ हैं जो शरणार्थियों के संकट को पैदा करती हैं।

विश्व के अलग-अलग हिस्सों में रहने वाले मज़दूर वर्ग का रवैया शरणार्थियों के प्रति दोस्ताना होना चाहिए क्योंकि शरणार्थी मज़दूर वर्ग का ही हिस्सा होते हैं। उनके साथ किसी भी क़िस्म के भेदभाव एवं ज़्यादतियों के ख़िलाफ़ हमें आवाज़ उठानी चाहिए। मज़दूर वर्ग को अन्तरराष्ट्रीयतावादी भावना का परिचय देते हुए हर मुल्क में शरणार्थियों के हक़ों के लिए लड़ना चाहिए एवं शरणार्थियों के बीच मज़दूर वर्ग के ऐतिहासिक मिशन यानी पूँजीवाद के ख़ात्मे एवं समाजवाद की स्थापना के विचारों को लेकर जाना चाहिए और शरणार्थियों को यह यकीन दिलाना चाहिए कि उनकी त्रासदी का अन्त भी सर्वहारा क्रान्ति में निहित है।

**– आनन्द सिंह**

# अन्तर-साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्धा का अखाड़ा बना सीरिया

पिछले कुछ हफ़्तों से रूस की ओर से सीरिया में आई.एस.आई.एस के ठिकानों पर किये जा रहे हमलों के बाद से सीरिया साम्राज्यवादी देशों के बीच होड़ का केन्द्र-बिंदु बना हुआ है। साम्राज्यवादी देशों की आपसी प्रतिस्पर्धा दुनियाभर में क्षेत्रीय युद्धों को लगातार जन्म दे रही है। आपसी प्रतिस्पर्धा के इस रूप में सामने आने से एक बार फिर युद्धों के बारे में मार्क्सवादी समझ सही साबित हुई है, कि जब तक निजी सम्पत्ति पर आधारित सामाजिक-आर्थिक ढाँचा क़ायम रहेगा, तब तक युद्धों का भौतिक आधार बना रहेगा और पूँजीवादी व्यवस्था में किसी न किसी रूप में युद्ध होते रहेंगे।

यहाँ हम सीरिया में जारी लड़ाई के अतीत में नहीं जा रहे हैं, इसके बारे में मज़दूर बिगुल के पुराने अंकों में लिखा जा चुका है ( फरवरी 2013 )। यहाँ हम केवल इस बात पर चर्चा करेंगे कि किस तरह दुनिया की दो बड़ी साम्राज्यवादी ताकतें सीरिया में बुरी तरह उलझी हुई हैं।

अमेरिका और रूस, दोनों ही सीरिया में हस्तक्षेप करने का कारण आई.एस. आई.एस को निशाना बनाना बता रहे हैं। यहाँ दोनों ही झूठ बोल रहे हैं। असल में दोनों ही अपने साम्राज्यवादी हितों को छुपाने के लिए इस बहाने का सहारा ले रहे हैं। अमेरिका इस पूरे क्षेत्र पर नियंत्रण करने के इरादे से सीरिया पर अपनी पसंदीदा सरकार बिठाना चाहता है, क्योंकि सीरिया के आस-पास के देश - तुर्की, इज़राइल, सउदी अरब, इराक - अमेरिका के ही साथ हैं। इस तरह अगर वह सीरिया में भी अपनी पसंद की सरकार बिठा लेता है तो इस पूरे क्षेत्र में बचे अपने एकमात्र विरोधी ईरान को भी घेर सकेगा और अपने हित में नीतियाँ लागू करवा सकेगा।

दूसरी ओर रूस के लिए सीरिया, पूरे मध्य-पूर्व में एकमात्र सहयोगी है। इसके ज़रिये वह इस पूरे क्षेत्र में अपनी टाँग अड़ाये रख सकता है। सोवियत संघ में शामिल रहे पूर्वी यूरोप के देशों के बाहर सिर्फ दो ही देशों में रूस के सैनिक अड्डे हैं - एक वियतनाम में है और दूसरा सीरिया में।

दूसरा, अगर सीरिया अमेरिका के नियंत्रण में आ जाता है तो अमेरिका के लिए क़तर से लेकर सीधे पश्चिमी यूरोप तक गैस पाइपलाइन बिछाना आसान हो जायेगा क्योंकि बाकी देश तो उसी के सहयोगी हैं। इससे रूस के आर्थिक हितों को बड़ा नुकसान होगा क्योंकि इस समय पूर्वी यूरोप को गैस का सबसे बड़ा सप्लायर रूस ही है।

तीसरा, आई.एस.आई.एस में शामिल कट्टरपंथियों में काफी संख्या रूस के चेचेन्या इलाके से गये कट्टरपंथियों की भी है। रूस इस बात को लेकर चिंतित है कि आई.एस.आई.एस. की जीत की स्थिति में इनमें से बहुत से लड़ाके हथियारों सहित रूस में लौट सकते हैं या फिर अमेरिका द्वारा रूस में गड़बड़ फैलाने के लिए इस्तेमाल किये जा सकते हैं।

चौथा, आर्थिक संकट के कारण प्रभावित हो रही रूसी अर्थव्यवस्था के चलते अपनी लोकप्रियता में आ रही गिरावट से लोगों का ध्यान हटाने के लिए रूसी राष्ट्रपति व्लादीमिर पुतिन हर कोशिश कर रहा है। सोवियत संघ और विशेष तौर पर स्तालिन के दौर की उपलब्धियों को प्रचारित किया जा रहा है (जिसका फौरी तौर पर बेशक उसको फायदा पहुँच रहा है, लेकिन लम्बे समय में यह रूस के लोगों में सोवियत संघ के इतिहास को दुबारा जानने की दिलचस्पी पैदा करेगा और शासक वर्ग के हितों के खिलाफ ही जायेगा)। इसके साथ ही 'आतंकवाद के खिलाफ जंग' का पुराना पत्ता खेलकर लोगों को अपने पक्ष में करने की कोशिश की जा रही है। इसका फौरी तौर पर पुतिन को फायदा मिलता भी दिख रहा है क्योंकि कई सर्वेक्षणों में सामने आ रहा है कि रूस के तकरीबन 70% लोग रूस के सीरिया में हस्तक्षेप को उचित ठहराते हैं।

इस तरह हम देख सकते हैं कि सीरिया में हस्तक्षेप के अमरीका और रूस दोनों के अपने-अपने कारण हैं। दोनों अपने ही हितों को ध्यान में रखकर चल रहे हैं। इसीलिए सीरिया मसले के इस राजनीतिक अर्थशास्त्र को समझना बेहद ज़रूरी है क्योंकि कई समझदार लोग भी अमेरिकी साम्राज्यवाद का विरोध करते-करते अनजाने में ही रूसी साम्राज्यवाद के पक्ष में जा खड़े होते हैं।

अब अमेरिका द्वारा का रूसी हस्तक्षेप का विरोध करना, उसके दोगलेपण को नंगा कर रहा है। अमेरिका के रक्षा सचिव ऐश्टन कार्टर का यह कहना कि रूस, "आग में तेल डाल रहा है" दोगलेपन की इंतिहा है। क्योंकि यह आग तो अमेरिका ने ही लगायी थी, जब उसने 4 साल पहले आज के आई.एस.आई.एस दहशतगर्दों को हरसंभव सहायता देकर खड़ा किया था ताकि सीरिया की असद सरकार के खिलाफ उनका इस्तेमाल कर सके। विकिलीक्स के ताज़ा खुलासों में तो यह भी ज़ाहिर हो चुका है कि अमेरिका ने अपने आर्थिक-राजनीतिक हितों के लिए असद सरकार को पलटने की योजना की शुरुआत 2006 से ही कर दी थी - 2011 से चल रहे मौजूदा संकट से भी 5 साल

**(पेज 14 पर जारी)**

# अन्तर-साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्धा का अखाड़ा बना सीरिया

पहले! आई.एस को सहायता देने के लिए अमेरिका ने सउदी अरब और तुर्की का भी सहारा लिया था और आज भी ले रहा है। तुर्की ने भी अपने हितों को ध्यान में रखते हुए, अपने विरोधी कुर्दिश विद्रोहियों को कुचलने के लिए, इस मसले का इस्तेमाल किया। फिर जब इन्हीं कट्टरपंथियों ने अमेरिका की ओर से दिये हथियार इराक और सीरिया में अपने हितों के लिए इस्तेमाल करने शुरू कर दिये और इनकी दहशतगर्दी के खौफनाक दृश्य पूरी दुनिया

के लोगों तक पहुँचे, तब जाकर पश्चिमी साम्राज्यवादियों को कार्रवाई करनी पड़ी। यह "कार्रवाई" थी - अमेरिका के केंद्रीय ख़ुफ़िया विभाग सी.आई.ए की मदद से एक "सेकुलर" फ़ौज को खड़ा करना, जिसके लिए उसने 500 अरब डॉलर की भारी रकम भी खर्च की। लेकिन इस "सेकुलर" फ़ौज को दी गयी ट्रेनिंग का नतीजा यह हुआ है कि इसमें शामिल सैनिक या तो आई.एस.आई.एस के साथ ही जुड़ गए हैं या फिर अल-नुसरा फ्रंट (जो सीरिया में अल-कायदा का ही फ्रंट है) से मिल गये। अमेरिकी कमांडर जनरल लॉयड आस्टिन ने माना कि 500 अरब डॉलर की यह योजना महज़ "4 या 5 लड़ाकों को ही तैयार कर पायी है" और अब किसी "नयी योजना" की ज़रूरत है।

यह नयी योजना क्या हो, इसको लेकर अमेरिकी शासक वर्ग के अलग-अलग धड़ों में तीखा मतभेद है। 2016 में डेमोक्रेटिक पार्टी की ओर से राष्ट्रपति पद की प्रमुख उम्मीदवार हिलेरी क्लिंटन और रिपब्लिकन पार्टी के ज़्यादातर नेता सीरिया के ऊपर "उड़ान प्रतिबंधित क्षेत्र" बनाने की तजवीज कर रहे हैं। लेकिन अमेरिकी सरकार के ज़्यादा सूझबूझ वाले राजनीतिज्ञ समझते हैं कि ऐसा करना ख़ुद अमेरिका के लिए घातक होगा क्योंकि "उड़ान प्रतिबंधित क्षेत्र" बनाने का मतलब होगा उन रूसी जहाज़ों को भी निशाना बनाना जो इस समय सीरिया में तैनात हैं, यानी रूस के साथ सीधे युद्ध में उलझना। लेकिन इस समय अमेरिका यह नहीं चाहता। फ़िलहाल वह सीरिया के तथाकथित 'सेकुलर' बागियों को मदद पहुँचाने तक ही सीमित रहना चाहता है। आर्थिक संकट की वजह से अमेरिका की राजनीतिक ताकत पर भी असर पड़ा है। इसलिए भी वह रूस के साथ सीधी टक्कर फ़िलहाल नहीं चाहता। अमेरिका की गिरती राजनीतिक ताकत का प्रत्यक्ष संकेत सयुंक्त राष्ट्र संघ की महासभा में अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा का भाषण था। ओबामा ने अपने पहले भाषण में रूस की ओर से आई.एस.आई.एस के अलावा तथाकथित "सेकुलर" बागियों को भी मारने के लिए उसकी ज़ोरदार निंदा की। पुतिन ने भी जब अपनी बारी में सीरिया मामले पर अमेरिका की नीति की आलोचना की तो ओबामा ने अपने दूसरे भाषण में रुख बदलते हुए रूस के साथ बातचीत के लिए तैयार होने की बात कही। ओबामा ने कहा कि सीरिया के साथ किसी भी समझौते की शर्त राष्ट्रपति बशर अल-असद का अपने पद से हटना है लेकिन वह तब तक राष्ट्रपति बना रह सकता है जब तक कि इस मसले का कोई समाधान नहीं निकल आता। साथ ही ओबामा ने यह भी कहा कि नयी बनने वाली सरकार में मौजूदा बाथ पार्टी के नुमाइंदे भी शामिल हो सकते हैं। सीरिया से किसी भी तरह का समझौता नहीं करने की पोजीशन से लेकर अब उसके नुमाइंदों को नयी सरकार में मौका देने की बात करना साफ़ तौर पर अमेरिका की गिरती साख को दर्शा रहा है। दूसरे, अमेरिका का सहयोगी जर्मनी भी शरणार्थी-संकट से परेशान हो सीरिया में अमेरिकी नीति का विरोध कर रहा है और सीरियाई हुकूमत से बातचीत की नीति की वकालत कर रहा है। दूसरी ओर चीन भी सीरिया मसले में दखल देने के संकेत दे रहा है। इसी वजह से सीरिया में युद्ध जारी रखने के लिए अब पश्चिमी साम्राज्यवादियों में उतना "उत्साह" नहीं है जितना कि 4 साल पहले था। आई.एस.आई.एस के खिलाफ रूसी कार्रवाई से अमेरिका फ़िलहाल सकपका गया है। वह अपनी साम्राज्यवादी आकांक्षाओं की वजह से रूसी दखल का समर्थन भी नहीं कर सकता और दुनिया भर की आम जनता के दबाव तले उसका खुलकर विरोध भी नहीं कर सकता। इसीलिए अब वह केवल इस बात के लिए रूस का विरोध कर रहा है कि रूस आई.एस.आई.एस के अलावा असद सरकार के खिलाफ लड़ रहे ''सेकुलर" बागियों को भी मार रहा है। लेकिन यह तथाकथित "धर्म-निरपेक्ष" बागी कौन हैं, इसके बारे में अमेरिका पूरी तरह चुप है। इसीलिए फ़िलहाल अमेरिका सीरिया में सीधे रूस के खिलाफ लड़ने के बजाए इन्हीं विरोधियों को हथियार और पैसे से मदद दे रहा है।

1991 में सोवियत-साम्राज्यवादी संघ के बिखरने के बाद अमेरिका दुनिया की एकमात्र साम्राज्यवादी महाशक्ति के तौर पर उभरा। सोवियत संघ के बिखराव के बाद कमज़ोर हुए रूस का फायदा लेकर इसने पूर्वी यूरोप में अपने प्रभाव का विस्तार किया और साथ ही मध्य-पूर्व में अपने हितों को आगे बढ़ाते हुए इराक के खिलाफ पहला खाड़ी युद्ध शुरू किया। इन घटनाओं को देखकर कई अनुभववादी बुद्धिजीवियों ने दुनिया की एक-ध्रुवीयता के सिद्धांत गढ़ने शुरू कर दिये थे कि अब पूरी दुनिया में अमेरिका का एकछत्र राज हो गया है और अमेरिका की अगुवाई में कायम नाटो धुरी की ताकत को चुनौती देने वाला अब कोई नहीं बचा है।

लेकिन ऐसे सभी सिद्धांतों का जवाब समय ने ही दे दिया। अभी सोवियत संघ के बिखराव को एक दशक भी पूरा नहीं हुआ था कि रूस अपने प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित अर्थव्यवस्था के आधार पर नये सिरे से उभरा और इक्कीसवीं शताब्दी के आते-आते चीन भी एक नयी आर्थिक और राजनीतिक ताकत के रूप में उभर चुका था। आज हम रूस-चीन की अगुवाई में चल रहे ब्रिक्स, शंघाई सहयोग संगठन को अमेरिकी अगुवाई वाले नाटो, जी-7 आदि के खिलाफ खड़ा हुआ देख सकते हैं। आर्थिक संकट के चलते सारे भू-राजनीतिक मतभेद भी और तीखे हो जाते हैं। इसीलिए आज हम नये सिरे से अनेक साम्राज्यवादी ताकतों को अपने पर तोलते हुए देख सकते हैं। जैसे जर्मनी नये सिरे से यूरोपीय संघ में अपनी प्रभावी भूमिका के चलते, पूरी दुनिया में अपने हितों के प्रसार के लिए प्रयत्न कर रहा है। उसी तरह जापान भी दूसरे विश्व-युद्ध के बाद से अपनी सैन्य गतिविधियों पर लगायी रोकों को हटा रहा है। फ़िलहाल वह चीन के साथ अपने अंतरविरोधों के चलते अमेरिका के पाले में खड़ा है।

इस तरह हम देख सकते हैं कि किस तरह आर्थिक संकट के इस दौर में दुनिया के तमाम बड़े साम्राज्यवादी देश इस संकट का समाधान युद्धों के रूप में देख रहे हैं।

फ़िलहाल जो घटनाक्रम बनता जा रहा है और अमेरिका की ओर से भी रूस के साथ बातचीत के संकेत दिये जा रहे हैं, उससे यह उम्मीद की जा सकती है कि सीरिया मसले पर रूस और अमेरिका किसी समझौते पर पहुँच सकते हैं। लेकिन मौजूदा पूँजीवादी संकट के बाद से तेज़ हुए ये अंतर-साम्राज्यवादी झगड़े और क्षेत्रीय युद्ध दुनिया के एक नये दौर में दाखिले के सूचक हैं जब पूँजीवाद के बुनियादी अंतरविरोध अपने पूरे क्रूर रूप में सामने आ रहे हैं और मानवता को युद्धों में झोंक रहे हैं। इसीलिए अगर इन साम्राज्यवादी ताकतों के दरमियान कोई सहमति बनती भी है तो वह अस्थायी ही होगी और ऐसी हर सहमति भविष्य की असहमति को ही जन्म देगी। इसीलिए जब तक निजी संपत्ति पर आधारित पूँजीवादी ढांचा ही नहीं उखाड़ फेंका जाता, तब तक पूँजीवाद में युद्धों का भौतिक आधार बना रहेगा। चाहे यह युद्ध विश्वव्यापी हों या फिर इलाकाई पैमाने के।

**– मानव**

# जन सरोकारों के कवि वीरेन डंगवाल की स्मृति में

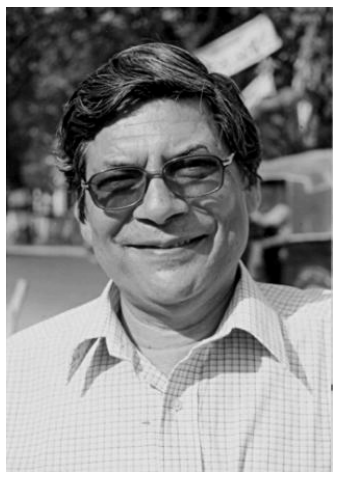

**जन्म: 5 अगस्त 1947, निधन: 28 सितम्बर 2015**

## हमारा समाज

यह कौन नहीं चाहेगा उसको मिले प्यार
यह कौन नहीं चाहेगा भोजन वस्त्र मिले
यह कौन न सोचेगा हो छत सर के ऊपर
बीमार पड़ें तो हो इलाज थोड़ा ढब से
बेटे-बेटी को मिले ठिकाना दुनिया में
कुछ इज़्ज़त हो, कुछ मान बढ़े, फल-फूल जायें
गाड़ी में बैठें, जगह मिले, डर भी न लगे
यदि दफ्तर में भी जाएँ किसी तो न घबरायें
अनजानों से घुल-मिल भी मन में न पछतायें।

कुछ चिंताएँ भी हों, हाँ कोई हरज नहीं
पर ऐसी भी नहीं कि मन उनमें ही गले घुने
हौसला दिलाने और बरजने आसपास
हों संगी-साथी, अपने प्यारे, ख़ूब घने।
पापड़-चटनी, आँचा-पाँचा, हल्ला-गुल्ला
दो चार जशन भी कभी, कभी कुछ धूम-धांय
जितना संभव हो देख सकें, इस धरती को
हो सके जहाँ तक, उतनी दुनिया घूम आयें
यह कौन नहीं चाहेगा?

पर हमने यह कैसा समाज रच डाला है
इसमें जो दमक रहा, शर्तिया काला है
वह क़त्ल हो रहा, सरेआम चौराहे पर
निर्दोष और सज्जन, जो भोला-भाला है
किसने आख़िर ऐसा समाज रच डाला है
जिसमें बस वही दमकता है, जो काला है।

मोटर सफ़ेद वह काली है
वे गाल गुलाबी काले हैं
चिन्ताकुल चेहरा-बुद्धिमान
पोथे कानूनी काले हैं
आटे की थैली काली है
हाँ साँस विषैली काली है
छत्ता है काली बर्रों का
यह भव्य इमारत काली है
कालेपन की ये सन्तानें
हैं बिछा रही जिन काली इच्छाओं की बिसात
वे अपने कालेपन से हमको घेर रहीं
अपना काला जादू हैं हम पर फेर रहीं
बोलो तो, कुछ करना भी है
या काला शरबत पीते-पीते मरना है?

**– वीरेन डंगवाल**

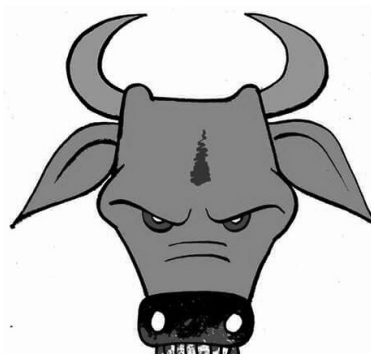

# एक गोभक्त से भेंट

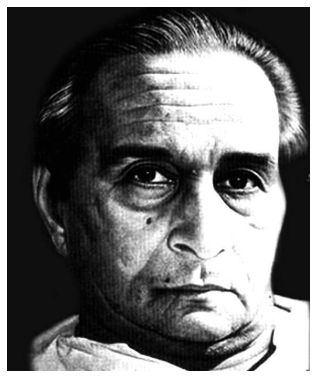

**• हरिशंकर परसाई**

**एक शाम** रेलवे स्टेशन पर एक स्वामीजी के दर्शन हो गए। ऊँचे, गोरे और तगड़े साधु थे। चेहरा लाल। गेरुए रेशमी कपड़े पहने थे। साथ एक छोटे साइज़ का किशोर संन्यासी था। उसके हाथ में ट्रांजिस्टर था और वह गुरु को रफ़ी के गाने के सुनवा रहा था।

मैंने पूछा - स्वामी जी, कहाँ जाना हो रहा है?

स्वामीजी बोले - दिल्ली जा रहे हैं, बच्चा!

स्वामीजी बात से दिलचस्प लगे। मैं उनके पास बैठ गया। वे भी बेंच पर पालथी मारकर बैठ गए। सेवक को गाना बंद करने के लिए कहा।

कहने लगे - बच्चा, धर्मयुद्ध छिड़ गया। गोरक्षा-आंदोलन तीव्र हो गया है। दिल्ली में संसद के सामने सत्याग्रह करेंगे।

मैंने कहा - स्वामीजी, यह आंदोलन किस हेतु चलाया जा रहा है ?

स्वामीजी ने कहा - तुम अज्ञानी मालूम होते हो, बच्चा! अरे गौ की रक्षा करना है। गौ हमारी माता है। उसका वध हो रहा है।

मैंने पूछा - वध कौन कर रहा है?

वे बोले- विधर्मी कसाई।

मैंने कहा - उन्हें वध के लिए गौ कौन बेचते हैं? वे आपके सधर्मी गोभक्त ही हैं न?

स्वामीजी ने कहा - सो तो हैं। पर वे क्या करें? एक तो गाय व्यर्थ खाती है, दूसरे बेचने से पैसे मिल जाते हैं।

मैंने कहा - यानी पैसे के लिए माता का जो वध करा दे, वही सच्चा गो-पूजक हुआ!

स्वामीजी मेरी तरफ़ देखने लगे। बोले - तर्क तो अच्छा कर लेते हो, बच्चा! पर यह तर्क की नहीं, भावना की बात है। इस समय जो हज़ारों गोभक्त आंदोलन कर रहे हैं, उनमें शायद ही कोई गौ पालता हो। पर आंदोलन कर रहे हैं। यह भावना की बात है।

स्वामीजी से बातचीत का रास्ता खुल चुका था। उनसे जमकर बातें हुईं, जिसमें तत्व मंथन हुआ। जो तत्व प्रेमी हैं, उनके लाभार्थ वार्तालाप नीचे दे रहा हूँ।

स्वामी और बच्चा की बात-चीत —

- स्वामीजी, आप तो गाय का दूध ही पीते होंगे?

- नहीं बच्चा, हम भैंस के दूध का सेवन करते हैं। गाय कम दूध देती है और वह पतला होता है। भैंस के दूध की बढ़िया गाढ़ी मलाई और रबड़ी बनती है।

- तो क्या सभी गोभक्त भैंस का दूध पीते हैं ?

- हाँ, बच्चा, लगभग सभी।

- तब तो भैंस की रक्षा हेतु आंदोलन करना चाहिए। भैंस का दूध पीते हैं, मगर माता गौ को कहते हैं। जिसका दूध पिया जाता है, वही तो माता कहलाएगी।

- यानी भैंस को हम माता... नहीं बच्चा, तर्क ठीक है, पर भावना दूसरी है।

- स्वामीजी, हर चुनाव के पहले गोभक्ति क्यों ज़ोर पकड़ती है? इस मौसम में कोई ख़ास बात है क्या?

- बच्चा, जब चुनाव आता है, तम हमारे नेताओं को गोमाता सपने में दर्शन देती है। कहती है - बेटा चुनाव आ रहा है। अब मेरी रक्षा का आंदोलन करो। देश की जनता अभी मूर्ख है। मेरी रक्षा का आंदोलन करके वोट ले लो। बच्चा, कुछ राजनीतिक दलों को गोमाता वोट दिलाती है, जैसे एक दल को बैल वोट दिलाते हैं। तो ये नेता एकदम आंदोलन छेड़ देते हैं और हम साधुओं को उसमें शामिल कर लेते हैं। हमें भी राजनीति में मज़ा आता है। बच्चा, तुम हमसे ही पूछ रहे हो। तुम तो कुछ बताओ, तुम कहाँ जा रहे हो ?

- स्वामीजी मैं 'मनुष्य-रक्षा आंदोलन' में जा रहा हूँ।

- यह क्या होता है, बच्चा ?

- स्वामीजी, जैसे गाय के बारे में मैं अज्ञानी हूँ, वैसे ही मनुष्य के बारे में आप हैं।

- पर मनुष्य को कौन मार रहा है ?

- इस देश के मनुष्य को सूखा मार रहा है, अकाल मार रहा है, महँगाई मार रही है। मनुष्य को मुनाफ़ाखोर मार रहा है,काला-बाज़ारी मार रहा है। भ्रष्ट शासन-तंत्र मार रहा है। सरकार भी पुलिस की गोली से चाहे जहाँ मनुष्य को मार रही है, स्वामीजी, आप भी मनुष्य-रक्षा आंदोलन में शामिल हो जाइए न!

- नहीं बच्चा, हम धर्मात्मा आदमी हैं। हमसे यह नहीं होगा। एक तो मनुष्य हमारी दृष्टि में बहुत तुच्छ है। ये मनुष्य ही तो हैं, जो कहते हैं, मंदिरों और मठों में लगी जायदाद को सरकार जब्त करले, बच्चा तुम मनुष्य को मरने दो। गौ की रक्षा करो। कोई भी जीवधारी मनुष्य से श्रेष्ठ है। तुम देख नहीं रहे हो, गोरक्षा के जुलूस में जब झगड़ा होता है, तब मनुष्य ही मारे जाते हैं।एक बात और है, बच्चा! तुम्हारी बात से प्रतीत होता है कि मनुष्य-रक्षा के लिए मुनाफ़ाख़ोर और काला-बाज़ारी के खिलाफ़ संघर्ष लड़ना पड़ेगा। यह हमसे नहीं होगा। यही लोग तो मंदिरो, मठो व गोरक्षा-आंदोलन के लिए धन देते हैं। हम इनके खिलाफ़ कैसे लड़ सकते हैं

- ख़ैर, छोड़िए मनुष्य को। गोरक्षा के बारे में मेरी ज्ञान-वृद्धि कीजिए। एक बात बताइए, मान लीजिए आपके बरामदे में गेहूँ सूख रहे हैं। तभी एक गोमाता आकर गेहूँ खाने लगती है। आप क्या करेंगे ?

- बच्चा ? हम उसे डंडा मारकर भगा देंगे।

- पर स्वामीजी, वह गोमाता है पूज्य है। बेटे के गेहूँ खाने आई है। आप हाथ जोड़कर स्वागत क्यों नहीं करते कि आ माता, मैं कृतार्थ हो गया। सब गेहूँ खा जा।

- बच्चा, तुम हमें मूर्ख समझते हो?

- नहीं, मैं आपको गोभक्त समझता था।

- सो तो हम हैं, पर इतने मूर्ख भी नहीं हैं कि गाय को गेहूँ खा जाने दें।

- पर स्वामीजी, यह कैसी पूजा है कि गाय हड्डी का ढाँचा लिए हुए मुहल्ले में काग़ज़ और कपड़े खाती फिरती है और जगह-जगह पिटती है!

- बच्चा, यह कोई अचरज की बात नहीं है। हमारे यहाँ जिसकी पूजा की जाती है उसकी दुर्दशा कर डालते हैं। यही सच्ची पूजा है। नारी को भी हमने पूज्य माना और उसकी जैसी दुर्दशा की सो तुम जानते ही हो।

- स्वामीजी, दूसरे देशों में लोग गाय की पूजा नहीं करते, पर उसे अच्छी तरह रखते हैं और वह खूब दूध देती है।

- बच्चा, दूसरे देशों की बात छोड़ो। हम उनसे बहुत ऊँचे हैं। देवता इसीलिए सिर्फ़ हमारे यहाँ अवतार लेते हैं। दूसरे देशों में गाय दूध के उपयोग के लिए होती है, हमारे यहाँ वह दंगा करने, आंदोलन करने के लिए होती है। हमारी गाय और गायों से भिन्न है।

- स्वामीजी, और सब समस्याएँ छोड़कर आप लोग इसी एक काम में क्यों लग गए हैं ?

- इसी से सबका भला हो जाएगा, बच्चा! अगर गोरक्षा का क़ानून बन जाए, तो यह देश अपने-आप समृद्ध हो जाएगा। फिर बादल समय पर पानी बरसाएँगे, भूमि ख़ूब अन्न देगी और कारखाने बिना चले भी उत्पादन करेंगे। धर्म का प्रताप तुम नहीं जानते। अभी जो देश की दुर्दशा है, वह गौ के अनादर का परिणाम है।

- स्वामीजी, पश्चिम के देश गौ की पूजा नहीं करते, बल्कि गो-मास खाते हैं, फिर भी समृद्ध हैं?

- उनका भगवान दूसरा है बच्चा। उनका भगवान इस बात का ख़्याल नहीं करता।

- और रूस जैसे देश भी गाय को नहीं पूजते, पर समृद्ध हैं?

- उनका तो भगवान ही नहीं बच्चा। उन्हें दोष नहीं लगता।

- यानी भगवान रखना भी एक झंझट ही है। वह हर बात का दंड देने लगता है।

- तर्क ठीक है, बच्चा, पर भावना ग़लत है।

- स्वामीजी, जहाँ तक मैं जानता हूँ, जनता के मन में इस समय गोरक्षा नहीं है, महँगाई और आर्थिक शोषण है। जनता महँगाई के ख़िलाफ़ आंदोलन करती है। जनता आर्थिक न्याय के लिए लड़ रही है। और इधर आप गोरक्षा-आंदोलन लेकर बैठ गए हैं। इसमें तुक क्या है ?

- बच्चा, इसमें तुक है। तुम्हे अंदर की बात बताता हूं। देखो, जनता जब आर्थिक न्याय की माँग करती है, तब उसे किसी दूसरी चीज़ में उलझा देना चाहिए, नहीं तो वह ख़तरनाक हो जाती है। जनता कहती है - हमारी माँग है महँगाई कम हो, मुनाफ़ाख़ोरी बंद हो, वेतन बढ़े, शोषण बंद हो, तब हम उससे कहते हैं कि नहीं, तुम्हारी बुनियादी माँग गोरक्षा है, आर्थिक क्रांति की तरफ़ बढ़ती जनता को हम रास्ते में ही गाय के खूँटे से बाँध देते हैं। यह आंदोलन जनता को उलझाए रखने के लिए है।

- स्वामीजी, किसकी तरफ़ से आप जनता को इस तरह उलझाए रखते हैं?

- जनता की माँग का जिन लोगो पर असर पड़ेगा, उसकी तरफ़ से। यही धर्म है। एक उदाहरन देते हैं।

बच्चा, ये तो तुम्हे पता ही है कि लूटने वालों के ग्रुप मे सभी धर्मो के सेठ शामिल हैं और लूटे जाने वाले गरीब मज्दूरो मे भी सभी धर्मो के लोग शामिल हैं, मान लो एक दिन सभी धर्मो के हज़ारों भूखे लोग इकटठे होकर हमारे धर्म के किसी सेठ के गोदाम में भरे अन्न को लूटने के लिए निकल पड़े। सेठ हमारे पास आया। कहने लगा- स्वामीजी, कुछ करिए। ये लोग तो मेरी सारी जमा-पूँजी लूट लेंगे। आप ही बचा सकते हैं। आप जो कहेंगे, सेवा करेंगे। बस बच्चा, हम उठे, हाथ में एक हड्डी ली और मंदिर के चबूतरे पर खड़े हो गए। जब वे हज़ारों भूखे गोदाम लूटने का नारा लगाते आये, तो मैंने उन्हें हड्डी दिखायी और ज़ोर से कहा- किसी ने भगवान के मंदिर को भ्रष्ट कर दिया। वह हड्डी किसी पापी ने मंदिर में डाल दी। विधर्मी हमारे मंदिर को अपवित्र करते हैं।, हमारे धर्म को नष्ट करते हैं। हमें शर्म आऩी चाहिए। मैं इसी क्षण से यहाँ उपवास करता हूँ। मेरा उपवास तभी टूटेगा, जब मंदिर की फिर से पुताई होगी और हवन करके उसे पुनः पवित्र किया जाएगा। बस बच्चा, वह जनता जो इकट्ठी होकर सेठ से लड़ने आ रही थी, वो धर्म के नाम पर आपस में ही लड़ने लगी। मैंने उनका नारा बदल दिया। जब वे लड़ चुके, तब मैंने कहा–धन्य है इस देश की धर्म-प्राण जनता! धन्य हैं अनाज के व्यापारी सेठ अमुकजी! उन्होंने मंदिर की शुद्धि का सारा ख़र्च देने को कहा है। बच्चा जिस सेठ का गोदाम लूटने भूखे लोग जा रहे थे, वो उसकी ही जय बोलने लगे। बच्चा, यह है धर्म का प्रताप। अगर इस जनता को गोरक्षा-आंदोलन में न लगाएँगे, यह रोजगार प्रापती के लिये आंदोलन करेगी, तनख़्वाह बढ़वाने का आंदोलन करेगी, मुनाफ़ाख़ोरी के ख़िलाफ़ आंदोलन करेगा। जनता को बीच में उलझाए रखना हमारा काम है बच्चा।

- स्वामीजी, आपने मेरी बहुत ज्ञान-वृद्धि की। एक बात और बताइए। कई राज्यों में गोरक्षा के लिए क़ानून है। बाक़ी में लागू हो जाएगा। तब यह आंदोलन भी समाप्त हो जाएगा। आगे आप किस बात पर आंदोलन करेंगे।

- अरे बच्चा, आंदोलन के लिए बहुत विषय हैं। सिंह दुर्गा का वाहन है। उसे सरकसवाले पिंजरे में बंद करके रखते हैं और उससे खेल कराते हैं। यह अधर्म है। सब सरकसवालों के ख़िलाफ़ आंदोलन करके, देश के सारे सरकस बंद करवा देंगे। फिर भगवान का एक अवतार मत्स्यावतार भी है। मछली भगवान का प्रतीक है। हम मछुओं के ख़िलाफ़ आंदोलन छेड़ देंगे। सरकार का मछली पालन विभाग बंद करवाँयेंगे।

बच्चा, लोगो की मुसीबतें तो तब तक खतम नही होंगी, जब तक लूट खत्म नही होगी, एक मुद्दा और भी बन सकता है बच्चा, हम जनता मे ये बात फैला सकते हैं कि हमारे धर्म के लोगो की सभी मुसीबतों का कारण दूसरे धर्मो के लोग हैं, हम किसी ना किसी तरह जनता को धर्म के नाम पर उलझये रखेगे बच्चा।

इतने में गाड़ी आ गई। स्वामीजी उसमें बैठकर चले गए। बच्चा, वहीं रह गया। ●

डाक पंजीयन : SSP/LW/NP-319/2014-2016
प्रेषण डाकघर : आर.एम.एस, चारबाग, लखनऊ
प्रेषण तिथि : दिनांक 20, प्रत्येक माह

# 'डिजिटल इण्डिया' स्कीम : सोच को नियंत्रित करने और रिलायंस का मुनाफ़ा बढ़ाने की एक नयी साज़िश

सितम्बर के अंतिम सप्ताह में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी अमेरिका यात्रा करके आये। इस दौरान फेसबुक, गूगल आदि कम्पनियों के प्रमुखों से उन्होंने मुलाकात की और अपनी 'डिजिटल इण्डिया' की परियोजना के लिए उनसे सहायता के तौर पर कुछ वायदे भी लिये। अपने हर अभियान की तरह 'डिजिटल इण्डिया' भी मोदी सरकार ने लोगों को इतना बढ़ा चढ़ाकर और गिफ्ट पैक लगाकर पेश किया है कि इसके असली खतरनाक पहलुओं पर लोगों की नज़र बहुत कम जा रही है। इसके इन पहलुओं पर चर्चा करने से पहले हमें ये समझना होगा कि क्यों मोदी सरकार भारतीय जनता की बुनियादी समस्याओं व उनके समाधान की बात करने की बजाय 'डिजिटल इण्डिया' पर ज़ोर दे रही है।

### नौजवानों की चर्चा का विषय: रोज़गार या मोबाइल का ऑपरेटिंग सिस्टम?

नरेन्द्र मोदी ने अमेरिका में 'डिजिटल इण्डिया' डिनर के आयोजन में कहा कि 'डिजिटल इण्डिया' भारत में ऐसे स्तर का बदलाव लाने का उद्यम है जो मानव इतिहास में पहले कभी नहीं हुआ। देश में आज 80 करोड़ युवा बदलाव का इन्तज़ार कर रहे हैं और ये 'डिजिटल इण्डिया' से ही सम्भव है। भारत के नौजवानों में आज सबसे बुनियादी मुद्दा एण्ड्राइड, विण्डोज़ और आईओएस (मोबाइल में प्रचलित तीन ऑपरेटिंग सिस्टम) के बीच विकल्प का है।

आइये, अब देखते हैं कि भारत के युवाओं को सच में क्या वही चाहिये जो मोदीजी बता रहे हैं। उत्तरप्रदेश में अभी हाल ही में चपरासी के 368 पदों के लिए आवेदन मंगवाये गये। क्या आप आवेदनों की संख्या का अन्दाज़ा लगा सकते हैं? 23 लाख, जी हां, इतने आवेदन जिसमें से 255 तो पीएचडी किए हुए नौजवान थे, 2.22 लाख इंजीनियर व अन्य संकायों से ग्रेजुएट थे। उसके बाद विभाग ने वो भर्ती ही रद्द कर दी क्योंकि इतने लोगों के इण्टरव्यू लेने में पूरे 4 साल लग जाते। ये हालात सिर्फ उत्तरप्रदेश की नहीं है। भारत के किसी भी कोने में चले जाइये, पुलिस, फौज, रेलवे, अध्यापक सभी भर्तियों में एक-एक पोस्ट के लिए दसियों हज़ार उम्मीदवार आते हैं। पुलिस, फौज आदि की भर्तियों में भगदड़ तक मच जाती है और कई नौजवान मारे तक जाते हैं। मुंबई में 2014 की पुलिस भर्ती के दौरान कई नौजवानों की बदइंतजामी की वजह से मौत हो गयी थी। ऐसे हालात में कोई हक़ीकत से निहायत अनजान या फिर निहायत बदमाश ही ये कह सकता है कि भारत के नौजवानों की मुख्य समस्या मोबाइल का ब्राण्ड या ऑपरेटिंग सिस्टम है। नरेन्द्र मोदी नौजवानों के जिस वर्ग की बात करते हैं वो खाते पीते घरों का एक छोटा सा हिस्सा है। बहुसंख्यक नौजवानों के लिए आज मूल मुद्दा बेहतर और निःशुल्क शिक्षा, स्वास्थ्य और स्थायी रोज़गार का है। लेकिन मोदी सरकार उस दिशा में तो उल्टा काम कर रही है। पिछले साल के बजट में स्वास्थ्य के खर्च में कटौती कर दी गयी ताकि लोग प्राइवेट अस्पतालों में जाने को मज़बूर हों। सरकारी स्कूलों को बन्द किया जा रहा है ताकि प्राइवेट दुकाननुमा स्कूलों की बिक्री बढ़े। श्रम कानून बदले जा रहे हैं और कम्पनियों को ये छूट दी जा रही है कि वो अपने यहां काम करने वालों को कभी भी लात मारकर बाहर निकाल सके। ऐसे हालात में मोदी सरकार 'डिजिटल इण्डिया' का नारा किसके लिए दे रही है? क्या देश के सभी नौजवानों के लिए, सभी नागरिकों के लिए? नहीं, ये नारा भारत के खाते-पीते मध्यमवर्ग के एक बहुत छोटे से हिस्से के लिए है, जो मज़दूरों के शोषण का एक हिस्सा पाता है व साथ ही उच्च मध्यमवर्ग की ज़िन्दगी जीना चाहता है। उसे इस तरह के हवा-हवाई नारे बहुत अपील करते हैं। उसे लगता है कि 'डिजिटल इण्डिया' स्कीम से ही उसकी सारी समस्याओं का निवारण हो जायेगा। पर उस मध्यम वर्ग के बड़े हिस्से को भी इस पूरी स्कीम के ख़तरनाक पहलुओं के बारे में पता नहीं है। ऐसे में इस योजना के पर्दे के पीछे छुपे सच को जानना देश के नौजवानों व मज़दूरों-मेहनतकशों के लिए बेहद ज़रूरी है।

यहां एक महत्वपूर्ण गौर करने लायक बात ये है कि 'डिजिटल इण्डिया' का नारा बुलन्द करने के लिए नरेन्द्र मोदी ने सरकारी कम्पनियों बीएसएनएल या एमटीएनएल का कायाकल्प करने व उनके नेटवर्क को सुधारने की कोशिश नहीं की है बल्कि प्राइवेट कम्पनियों से सहायता माँगी है। इसमें से गूगल 500 स्टेशनों पर मुफ्त वाईफाई की सुविधा देगी। सवाल तो ये भी उठता है कि भारत के स्टेशनों पर पीने के पानी की भयंकर कमी है और ऐसे में अगर नरेन्द्र मोदी कुछ सहायता लेने गये तो उन्होंने कॉर्पोरेट जगत से पीने के पानी की सुविधा के लिए वाटर कूलर और वाटर प्यूरीफायर क्यों नहीं मांगे? लेकिन उद्योग जगत के प्रिय प्रधानमंत्री से ऐसी आशा करना ही गलत है। फ्री या सस्ता पानी जनता को देने से उद्योग जगत का मुनाफ़ा मारा जायेगा और हमारे प्रधानमंत्री को ये कत्तई बर्दाश्त नहीं होगा।

### 'डिजिटल इण्डिया' के माध्यम से आपके विचारों पर नियंत्रण कैसे?

मुनाफ़े पर टिकी इस व्यवस्था के शासक वर्ग के लिए राज करने की बुनियादी शर्त ये है कि वो जनता के विचारों को नियंत्रित करें और उनसे अनुमति लेकर उन पर राज करे। इसके लिए जनता तक उन विचारों को ज़्यादा पहुँचाया जाता है जो उन्हें अपनी ज़िन्दगी की बुनियादी समस्याओं व उनके समाधान के विचारों से दूर भटकाने का काम करें। लेकिन समाज में क्रान्तिकारी ताक़तें उन विचारों को जनता तक पहुँचाने की कोशिश करती है जिससे जनता समस्या की असली जड़ तक जाये और इस अन्यायपूर्ण व्यवस्था को बदलने में लग जाये। इसलिए शासक वर्ग के लिए ये जरूरी हो जाता है कि वो किसी भी तरीके से जनता तक पहुँचने वाली इन आवाज़ों को चुप करवाये। इसके लिए वो दमन का सहारा भी लेते हैं पर दमन की अति भी उनके लिए एक ख़तरा होती है। ऐसे में वो दूसरे तरीके से इन विचारों को पहुँचने से रोकते है। मसलन आपको आजकल ज़्यादातर बड़े अख़बार सालाना स्कीम पर मिल जाते हैं और उनकी रद्दी की कीमत भी आपके द्वारा चुकाये गये पैसे से ज़्यादा होती है। यानी कि आपको फ्री में अख़बार मिल जाता है। निश्चित सी बात है कि ऐसे में तमाम प्रगतिशील अख़बार, पत्रिकाएं जो बिना विज्ञापन या कॉर्पोरेट सहायता के निकलते हैं, उनको खरीदने में लोगों की दिलचस्पी कम हो जाती है क्योंकि उनकी कीमतें ज़्यादा होती हैं। इण्टरनेट की दुनिया में भी 'डिजिटल इण्डिया' के माध्यम से ऐसा ही करने की तैयारी है। डिजिटल इण्डिया प्रोजेक्ट का एक महत्वपूर्ण अंग फेसबुक के सीईओ जुकरबर्ग द्वारा चलाई जा रही इण्टरनेट डॉट ऑर्ग नामक महत्वाकांक्षी परियोजना है। इसके लिए फेसबुक ने दुनियाभर की कुछ मोबाइल सेवा प्रदाता कम्पनियों के साथ गठबंधन किया है। अगर आपके पास उस कम्पनी का सिम है तो आपको कुछ वेबसाइटस फ्री में ब्राउज़ करने को मिलेंगी। लेकिन यही इस पूरी परियोजना का सबसे ख़तरनाक कदम है। इसमें वही वेबसाइट होंगी जो 'मास्टर कम्पनी' फेसबुक के पास रजिस्टर्ड होंगी। ये स्कीम फ्री होने के कारण ज़्यादातर आबादी प्रयोग करेगी पर उसे खबरों, विचारों के नाम पर वही मिलेगा जो फेसबुक चाहेगी। ऐसी वेबसाइट जिन्हें देखने के लिए आपको अलग से मोबाइल डाटा प्लान लेना पड़ेगा, वो अपने आप ही इस दौड़ में बहुत पीछे रह जायेंगी। ऐसे में अभी अगर वो इण्टरनेट के माध्यम से अपनी बात लोगों तक पहुँचा पा रहे हैं तो आने वाले समय में उससे वंचित हो जायेंगे। वैसे तो आज भी फेसबुक से लेकर इण्टरनेट के अन्य औजारों का इस्तेमाल शासक वर्ग ही अपने पक्ष में कर रहा है पर कहीं ना कहीं प्रगतिशील ताक़तों के लिए भी थोड़ी जगह बचती है कि वो जनता तक अपने विचारों को इन माध्यमों से पहुँचा पाये। डिजिटल इण्डिया स्कीम के सफल होने पर ये सम्भावना बेहद कम हो जायेगी।

### रिलायंस का मुनाफ़ा बढ़ाने की कोशिश!

इण्टरनेट डॉट ऑर्ग नामक फ्री स्कीम के लिए फेसबुक ने दुनियाभर की चुनिन्दा कम्पनियों के साथ क़रार किया है जिसमें भारत में सक्रिय मोबाइल कम्पनियों में से मात्र रिलायंस है। यानी कि इण्टरनेट डॉट ऑर्ग इस्तेमाल करने के लिए आपके मोबाइल में रिलायंस का सिम जरूरी होगा। इसके लिए आपको या तो अपना पुराना नम्बर रिलायंस में पोर्ट करवाना होगा या फिर रिलायंस की नई सिम लेनी पड़ेगी। कोई भी व्यक्ति मोबाइल को मुख्यतया कॉल करने के लिए प्रयोग करता है और ऐसे में लोग फ्री इण्टरनेट के चक्कर में रिलायंस का जबर्दस्त मुनाफ़ा करवाने का साधन बन जायेंगे। इस स्कीम और ऐसी ही तमाम अन्य जुगतों के बल पर चुनाव से पहले मोदी सरकार के प्रचार में लगाये धन की उगाही अंबानी, अडानी जैसे उद्योगपति सूद समेत कर रहे हैं और जनता की बुनियादी जरूरतों की क़ीमत पर मोदी सरकार निरन्तर उनको फायदा पहुँचाने की नीतियाँ बना रही है। मोदी सरकार इन योजनाओं को अख़बारों, पत्रिकाओं, टीवी, सोशल मीडिया आदि के दम पर जनता के बीच गिफ्ट पैकिंग लगाकर पेश कर रही है पर मज़दूरों-मेहनतकशों को इसके पीछे छुपी असलियत को पहचानना होगा।

**– सत्यनारायण**

## भगतसिंह की बात सुनो!

"पीपल की एक डाल टूटते ही हिन्दुओं की धार्मिक भावनाएँ चोटिल हो उठती हैं! बुतों को तोड़ने वाले मुसलमानों के ताज़िये नामक काग़ज़ के बुत का कोना फटते ही अल्लाह का प्रकोप जाग उठता है और फिर वह 'नापाक' हिन्दुओं के ख़ून से कम किसी वस्तु से सन्तुष्ट नहीं होता! मनुष्य को पशुओं से अधिक महत्त्व दिया जाना चाहिए, लेकिन यहाँ भारत में लोग पवित्र पशु के नाम पर एक-दूसरे का सिर फोड़ते हैं।"

**– भगतसिंह और उनके साथी, 'नौजवान भारत सभा, लाहौर का घोषणापत्र' से**

"...कितनी शर्म की बात है। कुत्ता हमारी गोद में बैठ सकता है। हमारी रसोई में निःसंग फिरता है, लेकिन इन्सान का हमसे स्पर्श हो जाये तो बस धर्म भ्रष्ट हो जाता है। ...सबको प्यार करने वाले भगवान की पूजा करने के लिए मन्दिर बना है लेकिन वहाँ अछूत जा घुसे तो वह मन्दिर अपवित्र हो जाता है! घर की जब यह स्थिति हो तो बाहर हम बराबरी के नाम पर झगड़ते अच्छे लगते हैं? तब हमारे इस रवैये में कृतघ्नता की भी हद पायी जाती है। जो निम्नतम काम करके हमारे लिए सुविधाओं को उपलब्ध कराते हैं, उन्हें ही हम दुरदुराते हैं। पशुओं की हम पूजा कर सकते हैं, लेकिन इन्सान को पास नहीं बिठा सकते।"

**– भगतसिंह, लेख 'अछूत का सवाल' से**

"लोगों को परस्पर लड़ने से रोकने के लिए वर्ग-चेतना की ज़रूरत है। ग़रीब मेहनतकशों व किसानों को स्पष्ट समझा देना चाहिए कि तुम्हारे असली दुश्मन पूँजीपति हैं, इसलिए तुम्हें इनके हथकण्डों से बचकर रहना चाहिए और इनके हत्थे चढ़ कुछ न करना चाहिए। संसार के सभी ग़रीबों के, चाहे वे किसी भी जाति, रंग, धर्म या राष्ट्र के हों, अधिकार एक ही है। तुम्हारी भलाई इसी में है कि तुम धर्म, रंग, नस्ल और राष्ट्रीयता व देश के भेदभाव मिटाकर एकजुट हो जाओ और सरकार की ताक़त अपने हाथ में लेने का यत्न करो।"

**– भगतसिंह, लेख 'साम्प्रदायिक दंगे और उनका इलाज' से**

मुद्रक, प्रकाशक और स्वामी कात्यायनी सिन्हा द्वारा 69 ए-1, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006 से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा मल्टीमीडियम, 310, संजय गांधी पुरम, फ़ैज़ाबाद रोड, लखनऊ से मुद्रित। सम्पादक: सुखविन्दर, अभिनव • सम्पाकीय पता: 69 ए-1, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ-226006